चन्दामामा
फरवरी १९७६
1 Re

Photo by: V. MUTHURAMAN

FREEDOM

"आपने कहा था कि ये बड़ी आसानी से साफ किये जा सकते हैं!"
सोमानी-पिल्किंगटन्स् वॉल टाइल्स आसानी से साफ किये जा सकते हैं तथा सम्पूर्ण स्वास्थ्य-सम्मत होते हैं। तरह तरह के डिजाइनों, फीके न पड़ने वाले रंगों—जगमगाते सफेद समेत में मिलते हैं। शानदार ऐसे कि देख कर जी खुश हो जाय। हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज लिमिटेड द्वारा निर्मित सैनिटरीवेयर तथा सोमा प्लम्बिंग फिक्सचर्स लिमिटेड द्वारा बने सोमा मेट्ल फिटिंग्स का बड़ी खूबसूरती के साथ सोमानी पिल्किंगटन्स् वॉल टाइल्स से मेल बैठ जाता है।
खूबसूरत स्नानगृह का प्रतीक
सोमानी-पिलकिंगटन्स् लिमिटेड
हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
सोमा प्लम्बिंग फिक्सचर्स लिमिटेड
२, रेड क्रास प्लेस, कलकत्ता-७०००0१
सचित्र रंगीन पुस्तिका— 'द गाइड टु ब्यूटिफुल बाथरूम्स' के लिए लिखिये और अपने प्रयोजन के अनुसार अपना स्नानगृह सजा लीजिये।
naa, SPL-7524 HIN

ये लीजिये
आपको लुभानेवाले
क्रॅकीज़
सांता क्लॉस की ही तरह एन. पी. भी बच्चोंके लिए स्वादिष्ट मिठाइयोंका खजाना लुटाने लाते हैं। एन. पी. क्रॅकीज़ च्युइंग गम—बबल गम भी—जो पेपरमिंट, पाइनएपल, टूटी फ्रूटी, ऑरेंज और अनोखे, सुपारीके स्वादयुक्त होते हैं।
इसके अलावा बॉनबाइट—जो मलाईदार और अप्रतिम स्वादिष्ट मिठाई है, और फलोंके रुचिकर स्वादवाले बालगम्स।
NP
आपकी रुचि-पसंद च्युइंग गम
NP — ISI गुणवत्ता के निशानवाले अद्वितीय च्युइंग गम्स और बबल गम्स।
अपनी जेबोंमें हमेशा NP—आपकी पसंद की च्युइंग गम्स रखिए।
दि नॅशनल प्रॉडक्टस
बंगलूर
CRACKIES
bonbite
Dattaram-NP-I HINDI

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस अंक से "माया सरोवर" नामक सचित्र रंगीन धारावाही कथा शुरू हो रही है। इस महीने की बेताल कथा "परिवर्तन" है। इस कथा के द्वारा हमें विदित होता है कि यदि मानव के समक्ष अपना कोई लक्ष्य हो तो उसे इस प्रकार अपने जीवन को चलाना है जिस से उसके लक्ष्य में बाधा न पड़े। संपत्ति के होते हुए भी जहाँ उदारता व परोपकार की भावना न हो, वहाँ संपत्ति लोगों को अपने से दूर रखती है। 'पापी धन' इस का उदाहरण है।

वर्ष : २८ फ़रवरी १९७६ अंक : ८

मित्र-भेद

[३१]

चोरों के सरदार के आदेश पर उसके अनुचर राजकुमार, मंत्री-पुत्र तथा कोशाध्यक्ष के पुत्र को, साथ ही उनके साथ आनेवाले सुबुद्धि को भी पकड़ ले-आये।

चोरों के सरदार ने उन लोगों की तलाशी ली, पर उसे कुछ भी हाथ न लगा। इसलिए उनके यहाँ से अपनी पसंद का एक बढ़िया वस्त्र लेकर सरदार ने चारों व्यक्तियों को भेज दिया।

उन लोगों के जाते देख तोता फिर से चिल्ला उठा। सरदार ने पुनः उन्हें वापस बुला भेजा और बड़ी सावधानी से उनकी तलाशी ली, लेकिन इस बार भी उसे कुछ नहीं मिला। इसलिए उन्हें छोड़ दिया। उनके जाते देख तोता फिर चिल्ला उठा।

सरदार ने दुबारा उन्हें बुला भेजा और गरजकर पूछा–"हमारा तोता बताता है कि तुम लोगों के पास मूल्यवान मणि हैं। कहाँ हैं? निकालो तो!"

"अगर हमारे पास मणि होते तो क्या तलाशी के वक़्त आपके हाथ नहीं लगते?" चारों ने एक साथ उत्तर दिया।

"हमारा तोता तो बार-बार कहता है कि तुम लोगों के पास मणि हैं। वे रत्न तुम लोगों की देह पर नहीं हैं, इसलिए उन्हें तुम लोगों ने निगल डाला होगा। अब अंधेरा फैलता जा रहा है, कल सवेरे तुम लोगों के पेट चीर कर देखूँगा कि मणि हैं कि नहीं।" यों कहते चोरों के सरदार ने उन्हें एक कमरे में बंद कराया।

उस रात को सुबुद्धि ने यों सोचा–"कल सवेरे यह सरदार बाक़ी तीनों के पेट चीर डालेगा, उनके पेटों में मणियों को देख वह

अंतिम पृष्ठ का चित्र

यही सोचेगा कि मेरे भी पेट में होगा, इस आशा से वह मेरा भी पेट चीर डालेगा। किसी भी हालत में मेरी मौत निश्चित है। अब मुझे क्या करना होगा? बुद्धिमान लोगों को जब यह मालूम होता है कि उनकी मौत निश्चित है, तब वे दूसरों का उपकार करके उत्तम लोकों को प्राप्त करते हैं। इसलिए कल सुबह चोरों के सरदार के द्वारा पहले मेरे ही पेट को चिरवा डाले तो मेरे पेट में कुछ न पाकर वह बाक़ी तीनों को छोड़ देगा। मेरे पेट में मणि न पाने पर सरदार के मन में तोते के ज्योतिष पर से विश्वास उठ जाएगा। वह विरक्त होकर बाक़ी तीनों को प्राणों के साथ छोड़ देगा। उनके धन व प्राणों की रक्षा करने के उपलक्ष्य में मेरा यश इस संसार में ही नहीं, बल्कि परलोक में भी व्याप्त हो जाएगा। मेरे समस्त पापों का परिहार होगा। बुद्धिमान को निश्चय ही प्राप्त होनेवाली मौत का सामना करने के लिए इससे उत्तम मार्ग दूसरा नहीं है।"

यों सोचकर सुबुद्धि ने बाक़ी तीनों से असली बात बता दी और अपनी योजना का परिचय दिया। बाक़ी तीनों ने कृतज्ञतापूर्वक सुबुद्धि का हृदय से आलिंगन किया और बार-बार उसे धन्यवाद भी दिया।

सवेरा होते ही चोरों के सरदार ने चारों लोगों को अपने निकट बुलवाकर उनके पेट चिरवाने का प्रबंध किया।

इस पर सुबुद्धि ने हाथ जोड़कर सरदार से कहा–"महाशय, मेरी आँखों के सामने मेरे भाइयों के पेट चीरना मैं सहन नहीं कर सकता। इसलिए आप मुझ पर अनुग्रह करके सबसे पहले मेरा पेट चिरवा डालिए! यही आपसे निवेदन है।"

चोरों के सरदार ने उस पर रहम करके पहले उसी का पेट चीर डाला, लेकिन उसमें मणि प्राप्त न हुआ। इसे देख पश्चात्ताप करके उसने मन ही मन सोचा–"ओह, तोते की बातों पर विश्वास करके धन के लोभ में पड़कर मैंने पापपूर्ण कार्य किया है! बाक़ी लोगों के पेटों में भी मणि न होंगे। उन्हें मार डालना पाप होगा।" यों सोचकर उसने बाक़ी तीनों को छोड़ दिया।

वे तीनों सकुशल जंगल को पार कर रत्नपुर पहुँचे। मार्ग मध्य में वे लोग एक सराय में ठहर गये। वहाँ पर एरंडी का तेल पीकर अपने मणियों को पुनः प्राप्त किया। कोशाध्यक्ष के पुत्र ने उन मणियों को उस नगर में अधिक मूल्य पर बेच कर वह धन राजकुमार के हाथ दे दिया।

उन दिनों में रत्नपुर पर एक राजद्रोही शासन करता था। उसने राजवंश का नाश करके राज्य हड़प लिया और जनता को सताने लग गया था। इसलिए रत्नपुर के राज्य को जीतने की इच्छा राजकुमार के मन में पैदा हुई। उसने मंत्री-पुत्र को अपना मंत्री बनाया और कोशाध्यक्ष के पुत्र को अपना खजांची नियुक्त किया।

उन तीनों ने पड़ोसी राज्य में जाकर धन को पानी की भाँति बहा करके चतुरंगी सेना तैयार की। उस सेना को लेकर वे रत्नपुर पर चढ़ आये। रत्नपुर का राज्य बड़ी सुगमता के साथ उनके अधीन हो गया। इसके बाद वैभवपूर्वक राजकुमार का राज्याभिषेक हुआ। उसने पड़ोसी राज्य की राजकुमारी के साथ अपना विवाह भी किया। इसके उपरांत वह राज-काज को अपने दोनों मित्रों पर छोड़कर अपनी पत्नी के साथ सुख-भोगों में डूब गया।

माया सरोवर

सैकड़ों साल पहले की बात है। अमरावती नगर के राजा के दरबार में कुलशेखर नामक एक राज कर्मचारी था। उसके जयशील नामक इकलौता पुत्र था। जयशील की माँ उसके बचपन में ही मर गई थी, इसलिए कुलशेखर ने जयशील को बड़े ही लाड़-प्यार में पाला-पोसा। जयशील जब बीस साल का युवक बना, तब तक उसने अन्य सभी विद्याओं के साथ क्षत्रियोचित सभी विद्याएँ सीख लीं और उनमें प्रवीण बन गया।

कुलशेखर यह सोच ही रहा था कि अपने पुत्र का परिचय राजा को कराकर दरबार में उसे कोई नौकरी दिलवा दे, लेकिन अचानक वह बीमार पड़ा और कुछ ही दिनों में वह मर गया। इस वजह से उसकी इच्छा अधूरी ही रह गई।

जयशील अब अकेला था। उसकी देखभाल करते उसे सही मार्ग पर चलाने के लिए कोई निकट रिश्तेदार भी न था। इस हालत में जयशील का परिचय बुरी लतों में फँसे कुछ युवकों के साथ हुआ। वह उन युवकों के साथ मिलकर अपनी पैतृक संपत्ति पानी की तरह बहाने लगा। शीघ्र ही उसने जुए के घरों में भी जाना प्रारंभ किया।

अपने पिता की मृत्यु के बाद चार-पाँच महीनों के अन्दर ही जयशील ने अपनी सारी संपत्ति स्वाहा कर दी। वह अपनी इस बुरी हालत पर अब लज्जा का

अनुभव करने लगा। इसलिए वह तीन दिन तक भूखा रहते, मैले कपड़ों के साथ जुए के घर से बाहर आने में सकुचाने लगा। जुआखोरों में से कुछ लोगों ने जयशील की बुरी दशा पर रहम खाकर उसे खाना खिलाना चाहा, पर उसके आत्माभिमान ने उसे स्वीकार करने से रोक दिया। इस पर जयशील को भूखा रहते देख उसके एक मित्र देवशर्मा ने उसे सलाह दी कि वह अपनी इस चिंता को त्यागकर भावी कर्तव्य पर विचार करे।

जयशील पहले से ही भूख और चिंता से व्यथित था, ऐसी हालत में मित्र की सलाह पाकर वह नाराज़ हो गया और डांटकर बोला–"देवशर्मा, क्या तुम यह समझते हो कि तुम मुझे जो नीति के वचन और हित की बातें सुनाते हो, क्या मैं उन्हें नहीं जानता? मुझे अपनी मौत मरने दो।"

जयशील की बातों पर मुस्कुराकर देवशर्मा बोला–"जयशील! मेरी समझ में नहीं आता कि तुम ये सारी बातें जानते हुए भी इस जुए के घर में क्यों फँस गये? शायद तुम नहीं जानते कि हम जो पांसे खेलते हैं वे दरिद्र देवता के नेत्र हैं और ब्रह्मा जुआखोर के ललाट पर धूल को ही रेशमी गद्दों के रूप में तथा गली-कूचों को घर के रूप में लिख देते हैं। तुम पंडित हो, ऐसी हालत में इस प्रकार चिंता करते हुए बैठ जाना तुम्हें शोभा नहीं देता। अपनी गुजर-बसर का कोई उपाय भी तो सोच लो!"

जयशील देवशर्मा की बातें सुन थोड़ी देर मौन रहा। इसके बाद किसी निश्चय पर पहुंचे हुए व्यक्ति की भाँति सिर हिलाकर बोला–"देवशर्मा, तुमने एक सच्चे मित्र की भाँति यह सलाह दी। जिस नगर में मैंने वैभवपूर्वक अपने दिन बिताये, उसी नगर में दरिद्र की सी ज़िंदगी काटना मेरी इच्छा के विरुद्ध है। मैं किसी दूसरे देश में जाना चाहता हूं। तुम्हारी क्या राय है?"

देवशर्मा कुछ कहने ही जा रहा था, तभी जुए के घर के सामने कोलाहल मच गया। जयशील तथा देवशर्मा उस ओर बढ़े, तभी राजा के अश्वदल का सरदार कृपाणजित चार सिपाहियों को साथ ले कोड़े से जुआरियों को पीटते उसके निकट आया।

जयशील ने कृपाणजित के सामने जाकर समझाया–"महाशय, यह कैसा अन्याय है? इस प्रकार विवेक को खोकर अंधा-धुंध सब लोगों को पीटना कहाँ का न्याय है?"

"वाह! एक जुआरी का मुझे नसीहत देना कैसे आश्चर्य की बात है!" यों कहते कृपाणजित ने झट से जयशील पर कोड़ा चलाया।

मार खाते ही जयशील ने रोष में आकर एक लाठी ले कृपाणजित के सर पर दे मारा। लाठी खाकर कृपाणजित क्रोध से तमतमा उठा और चिल्लाकर जयशील पर तलवार चलाने को हुआ। इस बीच बिजली की तेजी के साथ जयशील ने कृपाणजित की कमर पर एक लात मारी।

कृपाणजित चीखकर नीचे गिर पड़ा। दूसरे ही क्षण उठकर द्वार की ओर भागने लगा। इसे देख बाक़ी जुआखोर कृपाणजित के अनुचरों पर टूट पड़े। कृपाणजित भागकर अपने घोड़े पर सवार होना चाहता था, तभी जयशील उसका पीछे करते कृपाणजित के घोड़े पर उछल पड़ा, एक हाथ से घोड़े की लगाम थामकर दूसरे
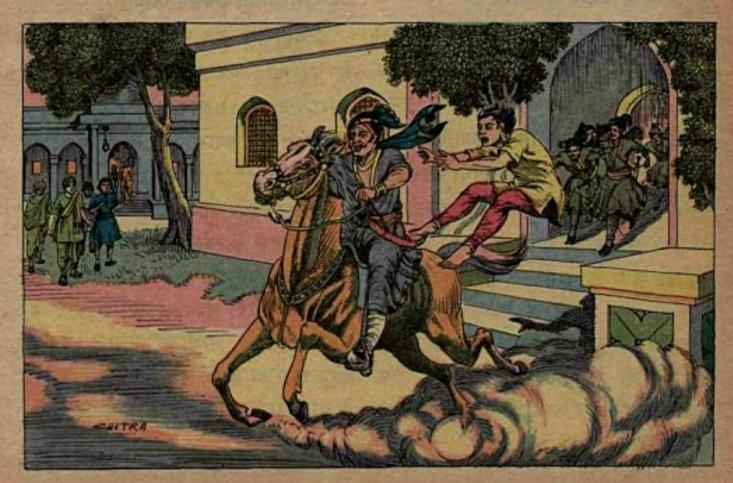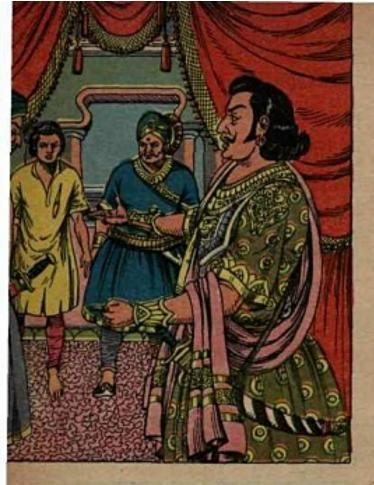
हाथ से कृपाणजित के केश पकड़कर कुहनियों से धक्का देने लगा।

घोड़ा राजपथ पर दौड़ता जा रहा था। एक ही घोड़े पर दो सवारों को लड़ते देख लोग अचरज में आकर देखते रह गये। उनमें से कुछ लोग तालियाँ बजाते घोड़े के पीछे दौड़ने लगे। घोड़ा अपनी आदत के अनुसार राजमहल के सामने जा रुका।

उस वक़्त राजा अपने महल की छत पर खड़े हो मंत्री के साथ मंत्रणा कर रहे थे। राजपथ पर लोगों की चिल्लाहट तथा दौड़नेवाले घोड़े पर दो सवारों को लड़ते देख वे भी विस्मय में आ गये। एक सेवक को बुलाकर आज्ञा दी–" यह शोरगुल कैसा? घोड़े पर लड़नेवाले वे शराबी कौन हैं? उन्हें मेरे पास लेते आओ।"

थोड़ी ही देर में राज-सेवक कृपाणजित तथा जयशील को राजा के पास ले आया। राजा ने अपने अश्वदल के सरदार को पहचान लिया। पर वे जयशील को जानते न थे, किंतु मंत्री ने जयशील को एक-दो दफ़े उसके पिता के साथ दरबार में देखा था। इस कारण उसने जयशील को पहचान लिया।

राजा ने क्रोध में आकर अपने अश्वदल के सरदार से पूछा–" कृपाणजित! तुम मेरे अश्वदल के सरदार हो! आदरणीय व्यक्ति हो! ऐसी हालत में राजपथ पर गुंड़ों जैसा यह अशोभनीय प्रदर्शन कैसा?"

" महाराज, यह एक जुआरी है। पीछे से मेरे घोड़े पर लाँघकर इसने मुझे खूब मारा-पीटा है। आप इसको उचित दण्ड दीजिए।" कृपाणजित ने दाँत पीसते हुए कहा।

इसपर राजा ने मुस्कुराकर कहा–" यह हमारे लिए अत्यंत आश्चर्यजनक तथा लज्जा की बात है कि म्यान में तलवार रखनेवाले मेरे अश्वदल के सरदार को एक बेहथियार साधारण जुआरी ने बुरी तरह से पीटा है। वास्तव में इस जुआरी के साथ तुम्हें झगड़ा करना क्यों पड़ा है?"

"महराज! राजपथ पर स्थित जुए के घर में जुआ खेलनेवाले ये सब लोग चबूतरों तथा ड्योढ़ियों पर बैठकर रास्ता चलनेवाले अधिकारियों का आदर-सम्मान नहीं करते। इन्हें शिष्टता सिखाने के ख्याल से मैंने जुए के घर में प्रवेश किया। वहाँ पर यह दुष्ट मुझ पर टूट पड़ा।" कृपाणजित ने शिकायत की।

राजा ने मंत्री की ओर प्रश्नार्थक दृष्टि से देखा। मंत्री ने एक बार खखारकर यों कहा–"महाराज! चाहे कारण जो भी हो, पर हमारे अश्वदल के सरदार की प्रतिष्ठा धूल में मिल गई है।"

"हाँ, तुम ठीक कहते हो, ऐसा व्यक्ति मेरे अश्वदल का सरदार बने रहे तो मेरी प्रतिष्ठा तो जाती रहेगी, साथ ही दुश्मन की नज़र में मैं हल्का बन जाऊँगा।" यों कहकर राजा पल भर के लिए रुके। तब कृपाणजित से बोले–"कृपाणजित, तुमने अपनी कायरता का प्रदर्शन करके मेरी सेना का अपमान किया है। इसके दण्ड स्वरूप में तुम्हें देशनिकाला सजा देता हूँ। तुम यदि मेरे देश की सीमा में कहीं भी दिखाई दोगे तो तुम्हारा सर कटवा दिया जाएगा। तुम अपनी तलवार यहीं पर छोड़कर यहाँ से तुरंत चले जाओ।"
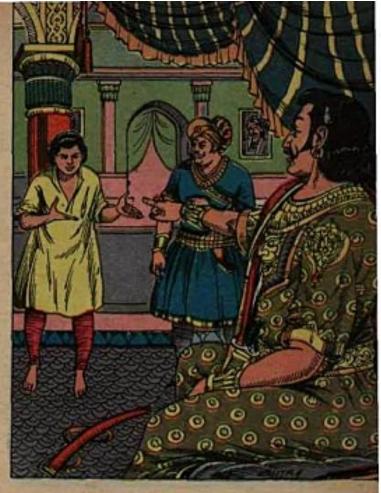
कृपाणजित कुछ कहने को हुआ, पर राजा ने हाथ उठाकर मना किया। इसपर कृपाणजित ने सोचा कि राजा के क्रोध को भड़काने पर उसी क्षण उसका सर कटवा दिया जाएगा, इस डर से वह अपनी तलवार पृथ्वी पर रखकर सिर झुकाये चला गया।

इसके उपरांत राजा ने जयशील की ओर कठोर दृष्टि प्रसारित करके कहा–"अरे जुआरी, मैं तुम्हें शिरच्छेद का दण्ड देता हूँ। कुछ कहना हो तो कह लो।"

जयशील अपनी दरिद्रावस्था का स्मरण करते निराशा का अनुभव करने लगा। फिर भी साहस पूर्वक बोला–"महाराज!

आपने मुझे शिरच्छेद का दण्ड सुनाया, अब मेरे कहने के लिए क्या है?"

"क्या तुम्हें अपने प्राणों का डर नहीं है?" राजा ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"महाराज! दरिद्रता के भय के सामने प्राणों के भय का महत्व ही क्या है?" जयशील ने कहा।

"हाँ, हाँ, बुजुर्गों ने कहा भी है न, जुआ तो सभी व्यसनों का सिरमौर है!" राजा ने व्यंग्य किया।

"आप सच कह रहे हैं, महाराज! अपना सब-कुछ खोकर बंधु एवं मित्रों के द्वारा तिरस्कृत हुए जुआरी लोग योगियों की भाँति इस संसार में किसी भी चीज से नहीं डरते।" यों कहकर मंत्री क्षण भर रुका, तब फिर कहा-"महाराज! मेरा आप से एक निवेदन है!"

"क्या है वह, मंत्री महोदय!" राजा ने पूछा।

"जयशील नामक यह युवक हमारे भूतपूर्व दरबारी कर्मचारी कुलशेखर का इकलौता पुत्र है। इसलिए कृपया आप इस पर थोड़ा अनुग्रह कीजिए!" मंत्री ने निवेदन किया।

राजा ने जयशील की ओर एक बार आपाद मस्तक देखकर सहानुभूति दिखाने का अभिनय करते कहा-"तब तो इसको शिरच्छेद का दण्ड न दूंगा, देश निकाले की सजा देता हूँ। यह कभी अपनी बुरी लतों से मुक्त होकर सच्चा मानव बन जाये तो, उसी वक़्त इसे उसके पिता की नौकरी अवश्य दी जाएगी।"

इसके उपरांत जयशील ने अपना मस्तक इस तरह झुका लिया जिसका अर्थ था कि क्या मैं अब जा सकता हूँ? इस पर मंत्री ने उससे कहा-"अब तुम जा सकते हो, पर महाराजा की बताई हुई बातों को याद रखो।"

जयशील राजा को प्रणाम करके पीछे मुड़कर थोड़ी दूर चला गया, तब राजा ने उसे बुलाकर कहा-"लो, कृपाणजित की

यह तलवार लेते जाओ, पर याद रखो, एक सप्ताह के अन्दर तुम्हें मेरे राज्य को छोड़कर जाना होगा, समझें!

"महाराज! जो आज्ञा!" यों जवाब देकर तलवार हाथ में ले जयशील दरबार से बाहर चला आया। उसके मन में यह कामना थी कि देश को छोड़कर जाने के पहले अपने अभिन्न मित्र देवशर्मा से विदा लेकर चला जाय! इस कारण से वह जुए के घर में देवशर्मा से मिलने के ख्याल से वहाँ पर पहुँचा, पर भीतर से दर्वाजे पर कुंडी चढ़ाई गई थी।

जयशील ने आश्चर्य में आकर ज़ोर से दर्वाजे पर दस्तक दिया और चिल्लाकर कहा—"सुनो, भीतर कौन है? दर्वाजा खोल दो तो सही!"

दूसरे ही क्षण भीतर से यह आवाज सुनाई दी—"यह जुआघर नहीं है! तुम कौन हो?"

यह उत्तर पाकर जयशील विस्मय में आ गया, और तीव्र स्वर में बोला—"मैं जुआरी नहीं हूँ। दर्वाजा खोलो तो सही!"

जुएघर का मालिक यह सोचकर काँप उठा कि बाहर से पुकारनेवाला व्यक्ति कोई राज कर्मचारी होगा। उसने दर्वाजा खोलकर जयशील को देखा, तब तिरस्कार पूर्ण स्वर में कहा—"तुमने अपने धन के साथ क्या अपनी दृष्टि तथा श्रवण शक्ति भी खो दी है? जानते नहीं हो कि मैं ने दर्वाज़े बंद क्यों किये हैं?"

जयशील ने झट से म्यान से तलवार निकालकर कहा—"इस बात पर मैं विश्वास नहीं कर सकता कि जुआरियों को चूसकर अपना पेट भरनेवाले तुम इतनी जल्दी सभ्य पुरुष बन गये हो? मैं भले ही धनहीन हूँ, पर खड्गहीन नहीं हूँ! बकवास बंद करके यह बताओ कि मेरे मित्र देवशर्मा घर के अन्दर हैं कि नहीं?"

जुए के घर के मालिक ने जयशील के हाथों में चमकती तलवार तथा उसके तमतमाये चेहरे को देख भाँप लिया कि

यह दो घंटे पहले जो व्यसनी तथा भाग्य का मारा था, वह नहीं है, विनयपूर्ण स्वर में बोला–"महाशय, नाराज़ मत होइए! अपने किये का प्रायश्चित्त करने के ख्याल से मैंने जुए के घर को बंद किया है। आइंदा मुझे राजभटों तथा यमराज के दूतों का भी भय नहीं रहा है।"

इस बार जयशील ने क्रोध में आकर जुए के धर के मालिक की छाती पर तलवार की नोक टिकाकर कहा–"अरे दुष्ट! तुमने बकवास बहुत ज्यादा की, मैं केवल यही पूछता हूँ कि मेरे मित्र देवशर्मा भीतर हैं कि नहीं, यही उत्तर दो! समझें!"

"महाशय! आप अपनी तलवार म्यान में रखिए! यदि किसी दूसरे वीर के साथ आप लड़ें तो हमारा समाज प्रसन्न होगा! मगर मुझ जैसे व्यक्ति का वध करे तो कोई प्रसन्न न होगा।" जुए के घर के मालिक ने कहा।

जयशील ने अपनी तलवार म्यान में रखकर जुए के घर के मालिक की गर्दन मरोड़ते हुए पूछा–"अरे कमबख्त! फिर तुम हद से ज्यादा बकवास करते हो! मेरे मित्र देवशर्मा भीतर हैं कि नहीं, बस, मुझे यही बता दो।"

"महाशय, मुझको मत मारो। जुए के घर के बंद हुए देख अन्य जुआरियों के साथ तुम्हारे मित्र भी कहीं चले गये हैं।" जुए के घर के मालिक ने थर-थर कांपते हुए उत्तर दिया।

"बस, मुझे जो उत्तर चाहिए था, सो मिल गया।" यों कहते जयशील वहाँ से निकलकर सड़क पर चला आया।

अब उसके सामने देश को छोड़कर चले जाने के सिवा दूसरा कोई उपाय न था। यदि समय ने साथ दिया तो फिर कभी देवशर्मा से मुलाक़ात हो सकती है! जयशील यों सोचते नगर को छोड़ जंगली रास्ते से चलने लगा। इस प्रकार एक सप्ताह की यात्रा करके जंगली फल खाते एक दिन की संध्या के समय तक वह दूसरे देश की राजधानी की सीमा पर पहुँचा। (और है)
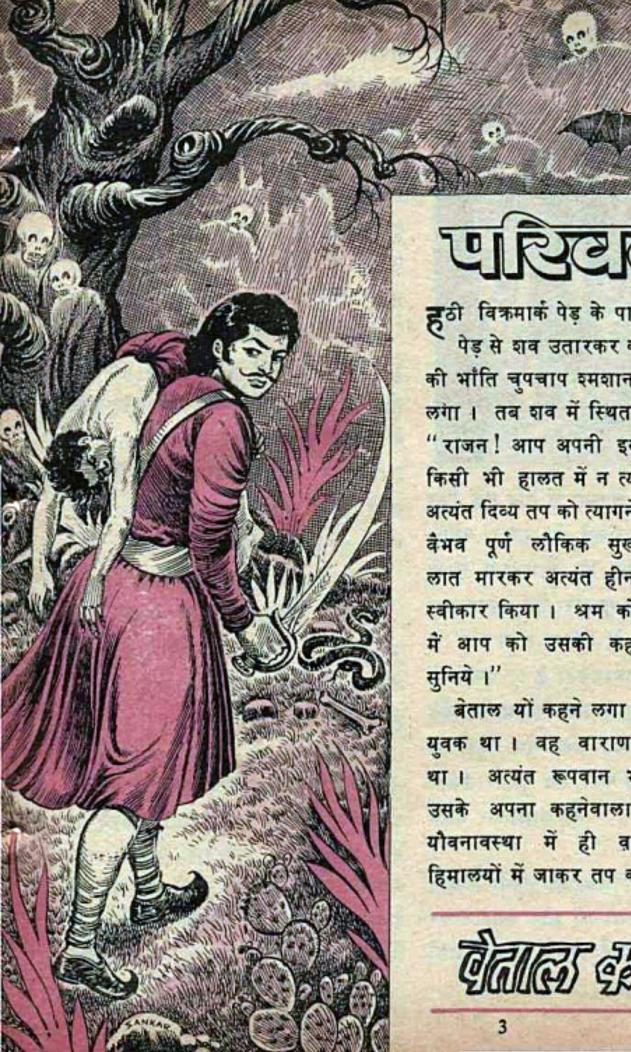
परिवर्तन

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया।

पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा– "राजन! आप अपनी इस दृढ़ लगन को किसी भी हालत में न त्यागिये। क्योंकि अत्यंत दिव्य तप को त्यागनेवाले विरूपाक्ष ने वैभव पूर्ण लौकिक सुख-भोगों को भी लात मारकर अत्यंत हीन गृहस्थाश्रम को स्वीकार किया। श्रम को भुलाने के लिए मैं आप को उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनिये।"

बेताल यों कहने लगा: विरूपाक्ष एक युवक था। वह वाराणसी का निवासी था। अत्यंत रूपवान भी था। मगर उसके अपना कहनेवाला कोई न था। यौवनावस्था में ही वह विरागी हो हिमालयों में जाकर तप करने लगा।

बेताल कथाएं
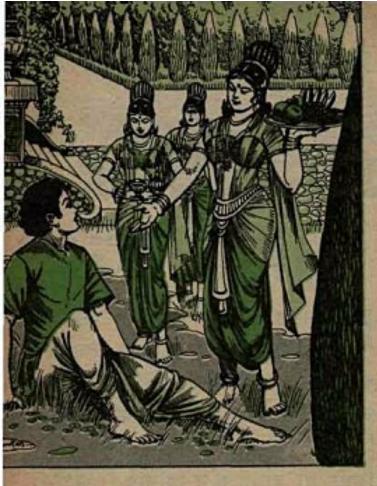
दो वर्ष कठोर तपस्या के बाद एक दिन उसके पास एक गंधर्व ने आकर कहा– "विरूपाक्ष! मुक्ति की कामना से छोटी सी अवस्था में ही तुम्हारा इस प्रकार तप करना प्रशंसनीय है, लेकिन मोक्ष पाने के लिए ज्ञान की आवश्यकता है। एकांत में बैठे रहोगे तो तुम्हें ज्ञान की प्राप्ति कैसे होगी? थोड़े समय तक तुम यहाँ से निकलकर देशाटन करो, तब तुम्हारे संकल्प की सिद्धि होगी।" यों समझाकर गंधर्व अदृश्य हो गया।

दूसरे ही क्षण विरूपाक्ष अपनी तपस्या बंद करके हिमालयों को छोड़ देशाटन पर निकल पड़ा। उसने अनेक तीर्थों, क्षेत्रों तथा महर्षियों को भी देखा। अनेक लोगों से उपदेश भी प्राप्त किया। यों भ्रमण करते-करते कई साल बाद वह अवंती नगर पहुँचा। वहाँ पर उसे एक सुंदर उद्यान दिखाई दिया। यात्रा की थकावट को दूर करने के ख्याल से विरूपाक्ष ने उस उद्यान में प्रवेश किया और एक वृक्ष की छाया में लेटकर सो गया।

उसने नींद से जागकर देखा, उसके आगे कुछ दासियाँ खड़ी थीं। उनके हाथों के थालों में चन्दन, सुगंध-लेपन तथा तरह-तरह के फल थे। विरूपाक्ष जब उठ बैठा, तब दासियों ने थाल उसके सामने रखे और अपने साथ उसको राजकुमारी के पास चलने का निवेदन किया।

विरूपाक्ष ने आश्चर्य में आकर पूछा– "तुम्हारी राजकुमारी का मुझसे क्या काम है? मैं उनके यहाँ क्यों जाऊँ? उन्हें यदि मुझसे कोई काम हो तो कहिए कि वे ही आकर मुझसे मिले।"

दासियों ने यों कहा–"हमारी राज कुमारी एक उत्तम चित्रकारिणी हैं। यह उद्यान उन्हीं का है। विहार करने वे इधर आई थीं। सोनेवाले आपको देख आपका चित्र खींचने की उनके मन में इच्छा जागृत हुई। इसलिए आपके नींद से जागते ही अपने पास ले आने का हमें

आदेश दिया है।" विरूपाक्ष दासियों के साथ राजकुमारी के महल में गया। राजकुमारी असाधारण सौंदर्यवती थी। उसके रूप-सौंदर्य पर मुग्ध हो उसके निकट पहुँचकर विरूपाक्ष ने अपना परिचय दिया।

इसके बाद राजकुमारी ने विरूपाक्ष की अनुमति लेकर बड़ी कुशलता के साथ शीघ्र ही उसका चित्र खींचा। अपनी इच्छा की पूर्ति करने के उपलक्ष्य में राजकुमारी ने उस रात को अपने अतिथि बने रहने का आग्रह किया। उसने अपनी सम्मति दी। उस रात को स्वादिष्ट भोजन करके अंतःपुर में हंसतूलिका तल्प पर आराम से सो गया।

स्वप्न में विरूपाक्ष को गंधर्व ने दर्शन देकर कहा–"विरूपाक्ष! अब तुम्हारा जीवन एक किनारे पहुँच गया है! तुम्हारा शुभ हो! तुम्हारा भाग्य प्रबल है। तुम्हें इस राजकुमारी से बढ़कर योग्य पत्नी कहीं प्राप्त न होगी!"

"महानुभाव! आप यह क्या कह रहे हैं? आपकी बातें मेरी समझ में नहीं आ रही हैं।" विरूपाक्ष ने अपने भोलेपन का परिचय दिया।

"अरे पगले! राजकुमारी तुमसे प्यार करती है। कल वह अपने पिता को तुम्हारा समाचार देकर तुमसे विवाह करने के लिए उन्हें मनानेवाली है, इसीलिए उसने तुमको आज रात के लिए अपना अतिथि

बनाया है। उसके प्रति तुम्हारा भी सही विचार है न?" गंधर्व ने अदृश्य होते हुए ये शब्द कहे।

विरूपाक्ष झट उठ बैठा। गंधर्व की बातें अब भी उसके कानों में गूंज रही थीं। वह उसी रात को राजकुमारी को सूचना दिये बिना वहाँ से निकल पड़ा और फिर अपनी यात्रा चालू की।

सवेरा होते-होते वह एक छोटे से गाँव में पहुँचा। उस गाँव के मुहाने पर ही उसे एक छोटी सी कुटी दिखाई दी। कुटी के बाहर उसे एक बूढ़ी दिखाई दी। विरूपाक्ष ने उसके निकट जाकर हाथ-मुंह धोने के लिए पानी माँगा।

बूढ़ी ने भीतर झाँककर पुकारा– "सत्यवती! कोई अतिथि आये हैं। लोटे से पानी लेते आओ।"

एक युवती टटोलते हुए बाहर आई। पानी का लोटा नीचे रखकर भीतर चली गयी।

विरूपाक्ष ने बूढ़ी से पूछा–"नानी, यह लड़की तुम्हारी पोती मालूम होती है। वह टटोलते हुए क्यों चलती है?"

"बेटा! सत्यवती जन्म से ही अंधी है। उसके माँ-बाप मर गये हैं। अब उसका एक मात्र सहारा में ही हूँ। में भी मर जाऊंगी तो न मालूम उसका क्या हाल होगा?" बूढ़ी ने आँखों में आँसू भरते हुए उत्तर दिया।

उसी क्षण विरूपाक्ष ने उस अंधी लड़की से विवाह करके वहीं पर रह जाने का निश्चय किया।

उस रात को स्वप्न में गंधर्व पुन. दिखाई दिया। इसपर विरूपाक्ष ने उससे पूछा– "महानुभाव! मैं ने सत्यवती के साथ विवाह करने का अपने मन में दृढ़ निश्चय कर लिया है। आप कृपया हमें आशीर्वाद दीजिए।"

गंधर्व "तथास्तु" कहकर अदृश्य हो गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, मेरे मन में कुछ संदेह हैं। गंधर्व ने विरूपाक्ष के द्वारा तप बंद करवाकर देशाटन क्यों कराया? जिस गंधर्व ने विरूपाक्ष को राजकुमारी के साथ विवाह करने की सलाह दी, जब विरूपाक्ष अंधी लड़की के साथ विवाह करने को तैयार हो गया, तब उसीने उसे क्यों आशीर्वाद दिया? राजकुमारी के द्वारा उसके साथ विवाह करने की बात सुनकर जो विरूपाक्ष घबराकर भाग गया, वही अपनी इच्छा से अंधी लड़की के साथ विवाह करने को क्यों तैयार हो गया? उसमें जो यह परिवर्तन हुआ है, उसका क्या कारण है? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "विरूपाक्ष जिस वक़्त तपस्या कर रहा था, उस वक़्त उसके मन में कोई भी इच्छा न थी। उसने कोई भी कर्म नहीं किया। बिना कामनाओं के कर्म करने वालों के लिए मोक्ष संभव हो सकता है। गंधर्व उसकी कामनाओं के लिए केवल बाह्य रूप जैसे है। कामनाएँ मोक्ष के लिए अनुकूल हो सकती हैं और न भी हो सकती हैं। विरूपाक्ष यदि राजकुमारी के साथ विवाह करता तो वह भौतिक सुख जरूर भोग सकता, परंतु वह मोक्ष से दूर हो जाता। सत्यवती के साथ विवाह करने में उसके मन में कोई कामना नहीं है। उल्टे कोई सत्कार्य करने के लिए उसे एक अच्छा अवसर प्राप्त हो गया है। इस कारण से हम कह सकते हैं कि विरूपाक्ष के अन्दर कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, कामना के सामने दीखते रहने पर भी उसने उसे जीत लिया है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

मनौती

लवंगी नई-नई ससुराल में आ गई थी, पर मायके के प्रति उसका मोह बराबर बना रहा। इसलिए वह बार-बार अपने मायके जाती, अपनी माँ को देख आती।

एक दिन मायके से एक आदमी ने आकर कहा–"तुम्हारी माँ की तबीयत बिलकुल ख़राब है। जल्दी तुम्हें बुला भेजा है।" यह बात सुनने की देरी थी, बस लवंगी उसी वक़्त कपड़े तक बदले बिना मायके चली गयी। जब वह अपने मायके में जा रही थी, रास्ते में मंदिर पड़ा। उसने मंदिर में जाकर मनौती की–"भगवान, मेरी माँ की तबीयत ठीक हो जायगी तो मैं अपने पति के द्वारा सौ बार मंदिर की परिक्रमा कराऊँगी।"

बात यह थी कि कुएँ के पास पैर फिसल जाने से लवंगी की माँ के पैर में मोच आ गयी थी। दूसरे दिन से वह चलने-फिरने लग गई थी, फिर भी लवंगी ने ससुराल में लौटकर अपने पति से अपनी मनौती की बात बताई और मंदिर चलने को कहा।

"तुम्हें भी मेरे साथ मंदिर में जाना होगा। जब तुम अपने मायके गयी थी, तब मुझे जुकाम हो गया। इस पर मैं ने मनौती की थी कि मेरा जुकाम ठीक हो जाएगा तो तुम्हारे सारे गहने भगवान को भेंट चढाऊँगा।" पति ने कहा।

यह बात सुनने पर लवंगी को लगा, मानों उसका कलेजा फट गया है। उस दिन से फिर कभी उसने मनौती की बात नहीं उठाई।

राजद्रोही

एक दिन राजा कृष्णदेवराय आधी रात को शयन गृह में पहुँचे। शय्या पर दुपट्टे के नीचे कोई चीज़ हिलती सी उन्हें नज़र आई, दुपट्टा उठाकर देखा तो उसके नीचे से एक काला नाग बाहर आया। राजा ने उसे अपनी तलवार से काट डाला।

दूसरे दिन राजा ने अपने मंत्री तिम्मरुसु से यह बात बताई। मंत्री ने बताया– "महाराज, आपकी हत्या करने के लिए ही यह षड़यंत्र हुआ है। उस राजद्रोही का पता लगाने तक आपको जान का डर बना रहेगा।"

"मेरे साथ दुश्मनी रखनेवाला कौन हो सकता है?" राजा ने पूछा।

"बिजापुर से हमारे नगर में एक सप्ताह पूर्व एक राजदूत आया था। उसके संबंध में सचेत रहने के लिए हमारे गुप्तचरों ने आगाह किया है। राजद्रोही के बन्दी होने तक आपको खान-पान से लेकर हर बात में सावधानी बरतनी होगी।" मंत्री ने सलाह दी।

उस दिन राजा के पास जो हल्वा भेजा गया था, उसकी जांच करने पर यह साबित हुआ कि उसमें ज़हर मिलाया गया है। उसमें से थोड़ा अंश बिल्ली को खिलाया गया। बिल्ली उसी वक़्त बेहोश हो गिर पड़ी। राजा ने यह समाचार मंत्री को दिया। मंत्री ने रसोइये को बुलवाकर पूछा। रसोइये ने मान लिया कि हल्वा में ज़हर मिलाया गया है। उसन यह भी कहा कि किसी ने उसे एक लाख स्वर्ण मुद्राओं का लोभ देकर उससे यह काम कराया है। रसोइये ने वह धन लाकर राजा तथा मंत्री के सामने रखा।

मंत्री ने राजा से कहा–"महाराज! राजद्रोही को आज रात को कारागार में

ओंप्रकाश गुप्त

रखेंगे और कल सुबह इसका फ़ैसला करेंगे।"

रसोइये के द्वारा राजद्रोह करने की बात उसी रात को सारे नगर में फैल गई।

दूसरे दिन सवेरे महामंत्री एक आदमी को बन्दी बनाकर राजा के पास ले आया और बोला–"महाराज! यही आप के बिस्तर पर साँप रखनेवाला राजद्रोही है।"

वह व्यक्ति अंत:पुर का द्वारपाल था। राजा उसे देख आश्चर्य में आया और पूछा–"तो रसोइये की क्या बात है? यह दूसरा राजद्रोही है क्या?"

तिम्मरुसु ने मुस्कुराकर कहा–"रसोइया कांटा है और यह मछली है। रसोइया वास्तव में राजद्रोही नहीं है। उसने आपके सामने जो हल्वा रखा, उसमें जहर नहीं मिलाया गया है, बल्कि नशीली दवा मिलाई गई है। उसे खाकर बिल्ली नहीं मरी। नशा उतर जाने के कारण वह मजे से उछल-कूद कर रही है। मैं ने ही रसोइए के द्वारा यह नाटक रचा है।"

"आप को यह नाटक क्यों रचना पड़ा?" राजा ने पूछा। इस पर मंत्री ने यों उत्तर दिया: "राजद्रोही के रूप में एक दूसरे व्यक्ति के बन्दी हो जाने की बात मालूम होते ही सच्चे राजद्रोही के मन में यह हिम्मत पैदा हो जाएगी कि उस पर इलजाम नहीं लगाया गया है। अलावा इसके उसे जिसने घूस दिया है, उसी के द्वारा दूसरे को एक लाख स्वर्ण मुद्राएँ घूस देने की बात सुनकर वह भी उतनी ही रक़म माँगने के लिए जरूर पहुँच जाएगा।

मैंने रात को बिजापुर के राजदूत के निवास के आसपास हमारे गुप्तचरों को तैनात किया और उन्हें यह आदेश दिया कि हमारे अंतपुर के परिचारकों में से कोई भी उस मकान के पास जावे तो उसे बन्दी बना दो। यह द्वारपाल वहीं पकड़ा गया।"

इसके बाद राजद्रोही की सुनवाई हुई। उसे कठोर दण्ड दिया गया। राजा ने अपने रसोइये का उचित रूप में सत्कार किया। बिजापुर से जो राजदूत आया था, उसे वापस भेज दिया गया।

धोखे की सजा

व्यापार में नये नये प्रवेश करनेवाले व्यक्ति ने हाट में २५० रुपयों में अरहर का एक बोरा ख़रीदा और उसे अधिक दाम पर बेचना चाहा, लेकिन कोई भी व्यक्ति उसे २६० रुपयों से ज्यादा देने को तैयार न हुआ।

इसी समय फुटकर चीज़ों के दूकानदार ने अरहर खरीदने की इच्छा प्रकट करते हुए अपनी तीन उंगलियाँ दिखाई और उतने ही सौ देने की बात कही। व्यापारी को इस बात पर विश्वास न जमा कि उसे एक साथ एक बोरे के लिए ५० रुपयों का नफा होगा। उसने फिर से पूछा। दूकानदार ने फिर तीन उंगलियाँ दिखाई। इस पर संतुष्ट हो नये व्यापारी ने अरहर बेच दिये, मगर दूकानदार ने उसके हाथ २५० रुपये ही रख दिये।

नये व्यापारी ने न्यायाधिकारी के पास जाकर फ़रियाद की। न्यायाधिकारी ने दूकानदार को बुलवाकर पूछा, तो उसने उत्तर दिया–"न्यायदेवता, मैं ने दो बार अपनी तीन उँगलियाँ उसे दिखाई, मेरी तर्जनी आधी ही है। इसलिए मैंने २५० रुपये ही देने की बात कही।"

इस पर न्यायाधिकारी ने क्रोध में आकर यों फ़ैसला सुनाया–"तुम कहते हो कि तुमने अपनी ढाई उँगली दो बार दिखाई, इसलिए इसको तुम ५०० रुपये दे दो।"

महा मांत्रिक

चक्रधरपुर का राजा कांतिसेन एक बार शिकार खेलने गया। शिकार खेलते-खेलते थक गया। उसने अपने घोड़े को एक वृक्ष की छाया की ओर बढ़ाया।

उस वृक्ष के नीचे तीन आदमी अलग-अलग बैठे हुए थे। एक व्यक्ति निश्चल दृष्टि से शून्य की ओर ताक रहा था। दूसरा काना था, और वह एक आंख से देख रहा था। तीसरा अपने दोनों हाथ मरोड़कर पीछे की ओर बांधे हुए था। तीनों राजा को देख विचलित नहीं हुए।

राजा कांतिसेन ने प्रथम व्यक्ति के निकट जाकर दर्प पूर्ण स्वर में कहा—"मेरे राज्य में रहते हुए तुम मेरे साथ ऐसा ही व्यवहार करते हो? उठ खड़े हो जाओ!"

प्रथम व्यक्ति ने राजा की ओर तीखी नजर डाली, और पुनः वह शून्य की ओर देखता रह गया। दूसरा जो काना था, राजा कांतिसेन से बोला—"महाराज, उन्हें क्रोध आयेगा तो वे आप से बात करेंगे। उनकी बातें सुनने पर आप बहरे हो जायेंगे।" ये बातें सुन राजा कांतिसेन डर गया। उसके मौन रहने पर प्रसन्न हुआ और काने से बोला—"तो तुम क्यों मेरा आदर नहीं करते?"

"मुझे क्रोध आएगा तो मैं अपनी दूसरी आंख खोल बैठूंगा। मेरी दूसरी आंख खुल गई तो सामनेवाला व्यक्ति अंधा हो जाएगा।" काना ने उत्तर दिया।

इस पर कांतिसेन ने तीसरे की ओर मुड़कर पूछा—"इन दोनों की भांति क्या तुम में भी कोई अद्भुत शक्तियां हैं?"

"क्यों नहीं! मैं अपने दोनों हाथ उठाकर किसी को प्रणाम करूंगा तो उसकी खोपड़ी फटकर वह मर जाएगा।" अपने दोनों हाथ पीछे रखा हुआ व्यक्ति बोला।

देवेन्द्रकुमार शर्मा

कांतिसेन ने सोचा कि ऐसी बड़ी शक्तियाँ रखनेवालों के बीच रहना उचित नहीं है। उसने अपने घोड़े की एड़ लगायी, इस पर काना बोला–"महाराज! आप रुक जाइए!" पीछे हाथ रखनेवाले व्यक्ति ने कहा–"अगर आप आगे बढ़ गये तो आपकी खोपड़ी फटकर मर जाएंगे!"

कांतिसेन भयभीत हो लौट आया और बोला–"तुम लोग जो चाहते हो, बोलो! मुझे तो अपने रास्ते जाने दो।"

"हम तीनों आपके साथ राजधानी को चलेंगे!" काना बोला। कांतिसेन ने आश्चर्य में आकर पूछा–"क्यों? किसलिए?"

"बेतुकी सवाल करके हमारे क्रोध को भड़काइए मत, समझें!" पीछे हाथ रखनेवाले ने कहा। इस पर कांतिसेन उन तीनों को अपने साथ राजधानी में ले गया और उनके ठहरने का अच्छा प्रबंध किया। इस पर राजा से काना बोला–"जब आप कल सुबह दरबार में जायेंगे, तब आप हमसे मिलते हुए जाइए!"

कांतिसेन का मंत्री माणिक्य शर्मा बड़ा ही कुशाग्र बुद्धि था। उसने यह सारी घटना देख राजा से पूछा–"महाराज! यह सब क्या है? ये लोग आखिर कौन हैं?"

"ये लोग अद्भुत शक्तियाँ रखते हैं। उनके क्रोध को भड़काना उचित नहीं है। अब हमें क्या करना होगा?" राजा ने मंत्री की सलाह माँगी।

"महाराज! ये लोग सचमुच ही शक्तियाँ रखते हैं अथवा हमें धोखा दे रहे हैं?" मंत्री ने अपना संदेह प्रकट किया।

राजा ने खीझकर कहा–"राजा को धोखा देने का प्रयत्न कोई भी नहीं करेगा! मैं दृढ़तापूर्वक कह सकता हूँ कि ये लोग धोखेबाज नहीं हैं।" मंत्री ने सलाह दी कि उन्हें जहर खिलाकर मरवा डालेंगे। पर राजा ने गुस्से में आकर कहा–"ऐसी अपूर्व शक्तियाँ रखनेवाले क्या जहर को भाँप न लेंगे? इसलिए हालत को ठीक से समझकर सलाह देना सीख
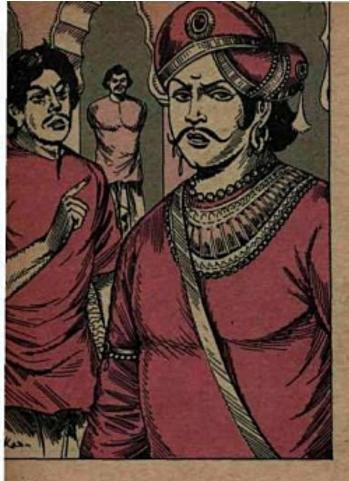
लीजिए।" यों कहकर राजा वहाँ से चला गया।

दूसरे दिन दरबार में जाते हुए राजा काना के आदेशानुसार उन तीनों के निवास में गया। काना ने राजा को देख कहा– "महाराज! आज से हम चारों इस राज्य पर शासन करेंगे। तीन दिन हम तीनों एक के बाद एक दरबार में जायेंगे, चौथे दिन आप जाइए।" कांतिसेन ने चौंककर कहा–"यह असंभव है।"

काना ने गरजकर कहा–"महाराज, आप यह समझकर बात कीजिए कि हमें क्रोध आया तो आप तथा आपकी प्रजा की क्या हालत होगी?"

राजा ने घबराकर कहा–"अच्छी बात है। तुम लोगों की जो मर्ज़ी! मैं अपने राज्य तथा अपनी प्रजा को सुखी देखना चाहता हूँ। आज ही मैं आवश्यक सारा प्रबंध करूंगा!" यों कहकर राजा ने नयी व्यवस्था की।

तीन दिन बीत गये। चौथे दिन राजा कांतिसेन तथा मंत्री माणिक्य शर्मा दरबार में गये। कोशाध्यक्ष ने उन्हें बताया कि पिछले तीन दिनों में खज़ाने का तीन चौथाई हिस्सा खर्च हो गया है।

उसी समय दरबार में से एक युवक तीन व्यक्तियों को साथ ले राजा के समीप पहुँचा। उनमें एक आदमी की जीभ न थी, दूसरे की एक आँख नहीं थी और तीसरे के दोनों हाथ न थे। उसने सारा समाचार राजा को बताया।

बात यह थी कि प्रथम दिन जिसने शासन किया, उसने यह आदेश जारी किया कि किसी को बात नहीं करनी चाहिए। परंतु युवक के साथ आये हुए तीनों में से एक ने भूल से बात की, इस पर उसकी जीभ कटवा दी गई थी। दूसरे दिन शासन करनेवाले ने यह ढिंढोरा पिटवाया कि सबको एक ही आँख से देखना होगा। एक ने भूल से दोनों आँखों से देखा, इसलिए उसकी एक आँख फुड़वा दी गई। तीसरे दिन शासन करनेवाले ने

आदेश दिया कि सब लोगों को अपने हाथ पीठ पीछे मोड़कर रखना होगा। इसका पालन न करनेवाले एक अभागे के हाथ कटवा दिये गये।

राजा कांतिसेन उस युवक को कोई उत्तर न दे सका, बल्कि सजल नेत्रों से दरबार से उठकर चल गया। इसके बाद जनता ने मंत्री से मिलकर निवेदन किया कि उन्हें इन कठिनाइयों से मुक्ति दिला दे।

मंत्री दिन भर सोचता रहा। रात को उसे एक पुरानी बात याद आ गई। चक्रधरपुर की पूर्वी दिशा में एक पहाड़ में एक बड़ी गुफा है। कहा जाता है कि उस गुफा में सैकड़ों वर्षों के पूर्व एक महा मांत्रिक रहा करता था। लोगों का यह विश्वास था कि वह मांत्रिक अब भी अदृश्य रूप में उसी गुफा में रहता है और उसे मनुष्य की बलि देने पर वह प्रत्यक्ष हो कामनाओं की पूर्ति करता है।

मंत्री ने सोचा कि दूसरे दिन राजा के दर्शन करके उन्हें महा मांत्रिक की याद दिलाकर उनकी मदद से इन तीनों दुष्टों का पिंड छुड़ा लिया जाय।

राजा ने सारी बातें सुनकर पूछा–"तुम्हारा कहना सही है। पर मनुष्य की बलि कैसे दे? अलावा इसके इन लोगों को मालूम हो जाय कि हम महा मांत्रिक की
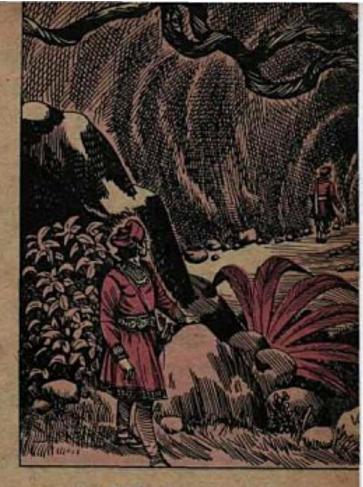
सहायता ले रहे हैं तो इनसे कोई खतरा उत्पन्न न होगा?"

"महाराज! आप मनुष्य की बलि की चिंता न करें। अब रही इन लोगों से डरने की बात! यदि हम इनसे डरकर कुछ भी न करेंगे तो हमारे लिए जनता के द्वारा खतरा पैदा हो सकता है। आप निश्चिंत होकर मेरे साथ चलिए।" मंत्री ने कहा।

इसके बाद राजा तथा मंत्री दोनों गुफा के पास पहुँचे। मंत्री राजा को गुफा के द्वार पर छोड़कर गहन अंधकारवाली उस गुफा के भीतर चिल्ला उठा–"महाराज! मैं अपनी प्रजा के वास्ते अपनी बलि दे रहा हूँ। आप चिंता न करें।" इसके बाद

मरनेवाले व्यक्ति की जैसी चीख सुनाई दी। राजा स्तम्भित हो देखता ही रहा, तभी विकट अट्टहास करते, मंत्र दण्ड को हिलाते महा मांत्रिक गुफा के भीतर से बाहर आया। उसकी दाढ़ी हाथ भर लंबी और सफ़ेद थी। वह एक लंबा गेरुए रंग का अंगरखा पहने हुए था। कंठ में हड्डियों की माला झूल रही थी।

"तुम्हारी तक़लीफ़ को मैं जानता हूँ। चलो।" महा मांत्रिक बोला।

दोनों ने दरबार में पहुँचकर देखा— काना सिंहासन पर बैठा हुआ है। मांत्रिक ने विकट अट्टहास करके मंत्र दण्ड से उसके सिर पर दे मारा और कहा—"इसकी शक्ति जाती रही है। इसको मार दो।"- लोग उस पर झपट पड़े।

इसके बाद मंत्री ने उसके बगल में बैठे बाक़ी दोनों के सिर पर दण्ड से दे मारा और उन्हें लोगों की भीड़ में ढकेल दिया। जनता ने उसी वक़्त तीनों को मार डाला। इस पर जनता तथा राजा भी अत्यंत आनंदित हुए। मगर उसी समय राजा को इस बात की याद आई कि उसके मंत्री ने जनता के कल्याण के हेतु अपना बलिदान किया है। राजा का दुख उमड़ पड़ा।

इसे देख महा मांत्रिक बोला—"महाराज! आपके अंध विश्वासों की वजह से ही यह सारा अनर्थ हो गया है। वास्तव में ये तीनों कोई भी अपूर्वशक्ति नहीं रखते हैं। इनमे से एक गूंगा है, एक अंधा है और तीसरा लूला है। इन लोगों ने बड़ी होशियारी से आपको डराकर आपको एक खिलौने की भांति नाच नचाया। मैं ने पहले ही इस रहस्य को भांप लिया, परंतु आप ने मेरी बातों पर ध्यान न दिया। इसलिए मैंने मांत्रिक का स्वांग रचा।" यों कहते मंत्री ने अपना वेष हटाया और मंत्री के रूप में प्रत्यक्ष हुआ।

राजा ने प्रसन्नता पूर्वक मंत्री के साथ आलिंगन किया। जनता ने हर्ष-ध्वनि की। बाद को उन तीनों के निवासों में ढूंढ़ने पर खज़ाने का सारा धन मिल गया।

भक्ति में अंतर

एक गाँव में कमला और वाणी नामक दो युवतियाँ थीं। दोनों अड़ोस-पड़ोस में रहती थीं। कमला गरीब परिवार की थी तो वाणी संपन्न परिवार की, दोनों ऐश्वर्य की कामना से लक्ष्मी की पूजा किया करती थीं।

एक बार शुक्रवार के दिन भगवती लक्ष्मी अपनी भक्तिनों को वरदान देने के लिए सन्यासिनी के रूप में आईं। लक्ष्मी देवी पहले संपन्न परिवार की वाणी का आतिथ्य प्राप्त कर अपनी झोली में से एक रुद्राक्ष निकालकर बोलीं–"तुम रोज इसकी पूजा करोगी तो हर सप्ताह तुम्हारी संपत्ति बढ़ती जाएगी।"

वाणी ने रुद्राक्ष अपने हाथ में लेकर कहा–"मैं इस समय लक्ष्मी-पूजा के लिए दस रुपये खर्च करती हूँ, ज्यों ज्यों मेरी संपत्ति बढ़ेगी त्यों-त्यों मैं ज्यादा खर्च करूँगी।"

इसके बाद लक्ष्मी देवी कमला के घर गईं। उसका आतिथ्य प्राप्त कर रुद्राक्ष देते हुए वे ही बातें बोलीं, जो वाणी से बोली थीं।

"भगवतीजी! मुझे रुद्राक्ष नहीं चाहिए। मैं संपत्ति के वास्ते लक्ष्मी देवी पर विश्वास किये बैठी हूँ। आपने इस गरीबिन का आतिथ्य स्वीकार किया। बस, मुझे और कुछ नहीं चाहिए।" फिर क्या था, कमला का घर संपत्ति से भर गया।

पापी धन

एक गाँव में रमाबाई नामक एक कंजूस बुढ़िया थी। उसके पास काफी धन था, लेकिन भर पेट खाना तक न खाती थी। दूसरों को दान देने की बात दूर रही, साथ ही वह हमेशा अपने हाथ में लाठी लिये कौओं तथा गवरैयों तक को अपने घर पर बैठने न देती थी। उसे देखते ही वे पक्षी उड़ जाते थे। उसने अपने सोना व चाँदी को एक कलश में भरकर रखा, कलश को अपने घर के बीच जमीन में गाड़कर उस पर एक टूटी चटाई डाल दी और वह उस पर लेट जाती थी। वह आराम के समय भी उसी चटाई पर बैठी रहती थी। उस बुढ़िया से सब लोग दूर ही रहते थे। पास तक पटकने न देते थे।

एक बार उस गाँव में ज्योतिषी आया। वह रमाबाई के घर के सामने एक पेड़ की छाया में बैठ गया और गाँववालों को उनका भविष्य बताने की सोची। उस रास्ते से गुजरनेवाले लोग विचित्र ढंग से उसकी ओर देखते गये, पर कोई भी उसके निकट न आया। वह यह सोच ही रहा था कि इसका कारण क्या हो सकता है! तभी उसके सिर पर लाठी की मार पड़ी। ज्योतिषी ने पीछे मुड़कर देखा, रमाबाई लाठी उठाये फिर मारने को तैयार थी। उसने ज्योतिषी को डांटकर कहा— "अरे दुष्ट, क्या तू मेरे पेड़ के नीचे बैठता है! तेरी ऐसी हिम्मत?"

ज्योतिषी घबराकर अपनी सारी पोथियां उठाये भाग खड़ा हुआ। उसने गाँववालों से रमाबाई के बारे में सारी बातें जान लीं। उसे लगा कि बुढ़िया की मूर्खता का कारण उसका भोलापन है। गाँववालों को उसके प्रति घृणा करना अन्याय है और

प्रवीण अस्थाना

प्रयत्न करने पर उसके स्वभाव को बदला जा सकता है।

उसी दिन आधी रात के वक़्त रमाबाई के घर के सामने एक विचित्र घटना घटी। काला नक़ाब ओढ़े एक आकृति अपने सिर पर नौ घड़ों की कतार उठाये उनके नीचे गिरे बिना नृत्य करने लगी। दिन भर सोकर रात भर जागनेवाली रमाबाई घुंघुरों की आवाज़ सुनकर बाहर आई, सामने नृत्य करनेवाली पिशाच जैसी आकृति को देख काँप उठी। इससे रमा बाई के हाथ की लाठी फिसलकर नीचे गिर गई। उसने झट से दर्वाजा बंद किया, छेद में से बाहर देखा। पिशाच के सर पर एक के ऊपर एक कुल नौ घड़े थे। सबसे ऊपरी घड़े पर दिया जल रहा था।

पिशाच ने थोड़ी देर तक नृत्य किया। दीपकवाले ऊपरी घड़े को नीचे गिराकर भाग गया। रमाबाई ने किवाड़ खोलकर देखा, सामने घड़े के ठीकरों को छोड़ कुछ न था। फिर भी बुढ़िया का डर बना रहा, वह चिल्ला उठी–"देखो भाइयो, मेरे घर भूत आ गया है, भूत!" पर किसी ने भी बुढ़िया की चिल्लाहट पर ध्यान नहीं दिया।

दूसरे दिन उसने रात की घटना सुना कर कई लोगों से उसका मतलब पूछा।
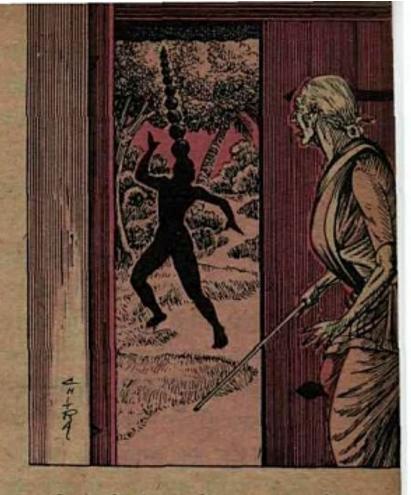
पर किसी ने भी उसकी परवाह न की। दूसरे दिन उसने दर्वाजे पर भीतर से कुंडी चढ़ा दी। एक झाड़ू और पुराना सूप निकट रख लिया, साथ ही लाठी भी रख ली। आधी रात के वक़्त घुंघुरों की आवाज़ सुनाई दी। उसने दर्वाजे के छेद में से बाहर देखा। इस बार पिशाच के सिर पर आठ ही घड़े थे। आठवें घड़े पर दीपक जल रहा था। पिशाच ने थोड़ी देर तक नृत्य किया, ऊपरी घड़ा फेंककर साथ घड़ों के साथ भाग गया।

इसके बाद दो दिन और बीत गये। प्रति दिन आधी रात के वक़्त बराबर पिशाच आ ही रहा है, नृत्य करके एक घड़ा

फोड़कर बाक़ी घड़ों के साथ वापस चला जा रहा है। रमाबाई यह सोचकर ओझा के घर चली गयी कि भले ही थोड़े पैसे खर्च हो जायें, पिशाच का पिंड़ छुड़ा लेना है। ओझा भी रमाबाई को देखते ही चौंक पड़ा और उसने भी अपने घर के दर्वाजे बन्द कर लिये। इसके बाद रमा बाई धोबी, नाई तथा पंडितजी के भी घर गई; पर किसी ने उसे अपने घर के भीतर आने न दिया। उसने तब भाँप लिया कि गाँववालों का व्यवहार उसके प्रति कैसा है!

वह निराश हो घर लौट रही थी, तभी उसने देखा कि एक जगह भीड़ इकट्ठी हुई है। उनकी बातों से रमाबाई को मालूम हुआ कि कोई नया ज्योतिषी गाँव में आया है और वह सबका भविष्य सही ढंग से बतला रहा है। रमाबाई सीधे ज्योतिषी के यहाँ गई।

ज्योतिषी को देखते ही रमाबाई ने हाथ फैलाकर पूछा–"महाशय, आप ही भविष्य बतानेवाले ज्योतिषी हैं? ज्योतिषी ने सब कें हाथ देखकर उनका भविष्य बताया, तब रमाबाई की ओर मुड़कर पूछा– "बताओ, तुम क्या चाहती हो?"

"आप मेहर्बानी करके मुझे एक पिशाच के चंगुल से बचाइए।" रमाबाई बोली। इसके बाद उसने सारा वृत्तांत ज्योतिषी को सुनाया और पूछा–"इस वक़्त पिशाच के सर पर पाँच ही घड़े हैं, इसका क्या मतलब है?"
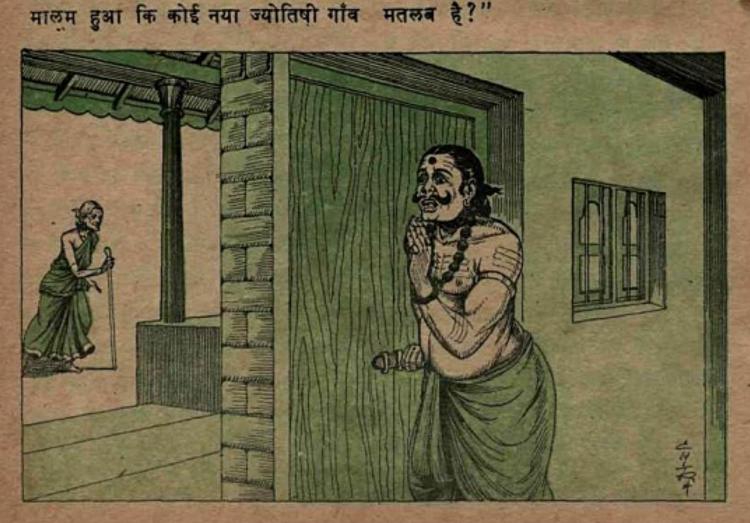
ज्योतिषी थोड़ी देर तक सोचता रहा, तब सर हिलाकर बोला–"रमाबाई! अब कुछ भी किया नहीं जा सकता। तुम्हारे अंतिम दिन निकट आ गये हैं। कारण यह है कि एक सप्ताह पहले ही पिशाचों का सरदार मर गया है। फिलहाल बाक़ी पिशाच अनाथ हो गये हैं। सुनते हैं कि पिशाचों के सरदार ने मरते वक़्त उन्हें बताया है कि उसके मरने पर तुम्हीं उन पिशाचों को क़ाबू में रख सकती हो। इसलिए वे सब बड़ी उत्सुकता के साथ तुम्हारा इंतज़ार कर रहे हैं। तुम कभी आराम से मरकर पिशाचिनी बन जाना चाहोगी तो भला कैसे चलेगा? इसलिए वे जल्द ही तुमको ले जाने की कोशिश कर रहे हैं। बाक़ी पाँच घड़ों के फूट जाने पर तुम पिशाचों की सरदारिन बन जाओगी!'

ये बातें सुन रमाबाई जोर से चीख उठी और गिड़गिड़ाने लगी–"महाशय, मैं अपना सब कुछ तुम्हें सौंप दूँगी। मुझे पिशाचों के ले जाने से बचा लो। यह भी इंतज़ाम करो कि वे पाँचों घड़े मेरे घर के सामने न फूटे।"

"तो क्या तुम पिशाचों की सरदारिन बनना नहीं चाहती हो? यदि तुम बचना चाहती हो तो तुम्हें अपनी सारी संपत्ति दान करना होगा। अन्नदान करो, पूजा-अर्चना करो। जाओ, इससे बढ़कर कोई दूसरा उपाय नहीं है।" ज्योतिषी ने साफ़ बताया।

उस दिन रमाबाई ने भिखारियों में दान करना चाहा, पर कोई भी भिखारी उसके घर की ओर न आया। दूर पर जो भिखारी दिखाई पड़े, उन्हें बुलाने पर वे भी भाग गये।

अंधेरा फैलने को था। रमाबाई ने कौओं तथा कुत्तों को खाना फेंका। मगर वे भी रमाबाई को देखते ही चंपत हो गये।

उस रात को रमाबाई के घर के सामने एक घड़ा और फूट गया, अब केवल चार घड़े बचे थे। सवेरा होते ही रमाबाई ज्योतिषी के पास गई और बोली–"महाशय, मेरा धन पापी धन है। मेरे हाथ का खाना कुत्ते तक सूंघ नहीं रहे हैं। क्या मेरी मौत निश्चित है?"

"जी हाँ, माईजी! तुमने मानवता खोकर धन जोड़ लिया। पशु तथा पक्षियों तक को मालूम हो गया कि तुम्हारे अन्दर मानवता नहीं है। तुम अपने धन को पानी की तरह बहाकर लोगों का उपकार करो। मंदिर बनवाकर पूजा-अर्चनाएं तथा उत्सव मनाओ। एक कुआँ खुदवाओ। लूले, लँगड़े व अंधों के आश्रय के लिए एक सराय बनवा दो। भूख से तड़पनेवालों में अन्नदान करो। ऐसा करोगी तो तुम्हारी आयु बढ़ने के साथ तुम्हारा यश भी चारों तरफ़ फैल जाएगा। तब पिशाच तुम्हारे घर तक पटकने से डर जायेंगे।" ज्योतिषी ने समझाया। इस पर रमाबाई ने कहा–"महाशय, मेरे हाथ से कोई भी व्यक्ति दान ग्रहण न करेगा। आप कृपया मेरे घर पधारकर अपने ही हाथों से ये सारे कार्य संपन्न कराइए।"

इसके बाद रमाबाई के साथ ज्योतिषी उसके घर पहुँचा। रमाबाई ने चाँदी व सोने से भरा कलश जमीन से बाहर निकाला और उसे ज्योतिषी के हाथ सौंप दिया।

ज़ल्द ही एक सराय तथा एक मंदिर बनकर तैयार हो गये। मंदिर में ठाठ से उत्सव मनाये गये। रमाबाई को लगा कि उसने पुनर्जन्म लिया है। उस दिन से पुरानी रमाबाई को सब लोग भूल गये।

सत्कार्य

एक चोर जो भी धन चोरी करके लाता, उसे गाँव के बाहर श्मशान में एक पेड़ के पास गाड़ता रहा। इसे देख पेड़ पर बैठा पिशाच सोचने लगा–"बेचारा, यह आदमी मेहनत करके जो धन छिपा रहा है, वह किसी के हाथ न लगे।" यों सोचकर पेड़ तक आनेवाले रास्ते को रोकते हुए पिशाच ने पत्थरों का ढेर लगाया।

एक दिन उस रास्ते से एक मुनि आ निकला। उसने पत्थरों के ढेर को देख आँखें लाल-पीली करते पूछा–"यह काम किस पिशाच ने किया है?"

पिशाच अदृश्य ही रहकर बोला–"मैं ने ही किया है, तुम वापस लौट जाओ। इधर से कोई रास्ता नहीं है।"

"तुम्हें ऐसा घमण्ड? तब तो तुम उस पेड़ से वैसे ही चिपक जाओ।" मुनि ने शाप दे दिया।

पिशाच डर गया। सर पीटते हुए शाप से मुक्त करने की मुनि से प्रार्थना की।

मुनि ने शांत होकर कहा–"ये सब पत्थर हटकर जब पहले की तरह रास्ता बन जाएगा, तभी तुम शाप से मुक्त हो जाओगे।" यों कहकर मुनि चला गया।

"पेड़ से चिपका हुआ मैं यह काम कैसे कर सकूँगा?" पिशाच ने हो हल्ला मचाया, पर मुनि ने उसकी बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। उस दिन से पिशाच की जहाँ तक नज़र जाती है, कोई दिखाई दे, तो उसे ज़ोर-शोर से पुकार बैठता। उस पुकार को सुनकर लोग डरके मारे भाग जाते। चौथी बार धन लाकर चोर ने वहाँ पर छिपाना चाहा, मगर वह भी पिशाच की पुकार सुनकर डर के मारे भाग गया।

एक बार एक दरिद्र उधर से आ निकला। उसने हिम्मत के साथ पेड़ के

निखिलेश रंजन

निकट जाकर पूछा–"पुकारनेवाला यह कौन है? तुमने मुझे किसलिए पुकारा?"

"मैं चाहे कोई भी होऊं तुम्हें क्या मतलब है? तुम्हें तो यहाँ पर पड़े पत्थर के ढेर को दूर ले जाना है, एक गाड़ी के बोझ के लिए में तुम्हें सौ सौ स्वर्ण मुद्राएँ दूँगा।" पिशाच ने अपनी शर्त बताई।

दरिद्र पिशाच की बातें सुन खुश हुआ। वह गाड़ी ले आया। रोज़ उन पत्थरों को उठाकर दूर के मैदान में पहुंचाता गया। इस प्रकार बीस दफ़ों में उसने पत्थर के ढ़ेर को पूर्ण रूप से हटाया।

इस पर पिशाच ने कहा–"अमुक जगह ख़ोदकर तुम अपना मेहनताना दो हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ ले लो। बाक़ी धन को छूना मत। मगर ख़्याल रखो, आइंदा तुम इस ओर मत आओ।" इसके बाद पिशाच मुनि के शाप से मुक्त हो गया। दरिद्र व्यक्ति उस जगह को खोदकर दो हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ ले गया और आराम से अपने दिन बिताने लगा।

"कमबख़्त मुनि ने कैसा शाप दिया! मैं बड़ी आसानी से उसके शाप से छूट गया।" यों सोचकर वह पुनः पत्थर उठा ले आया, और उसने रास्ते में पत्थरों का ढेर लगाया।

तीर्थयात्राओं से लौटते हुए मुनि ने पूछा–"अरे पिशाच! क्या तुम अभी तक पेड़ से चिपके हुए हो?"

"नहीं, मैं ने थोड़ा सा धन फेंक दिया और तुम्हारे शाप से छूट गया। फ़िर से मैं ने पत्थरों का ढेर लगा रखा है, देखते नहीं हो?" पिशाच ने जवाब दिया।

"ओह ऐसी बात है! तब तो तुम इन पत्थरों से मंदिर बनाने तक इसी पेड़ से चिपके रहो।" यों कहते मुनि चला गया।

उस दिन से पिशाच फिर से उस रास्ते से चलनेवालों को पुकारने लगा, मगर कोई भी उसके निकट नहीं आया। एक दिन धनी दरिद्र वहाँ पर आ पहुँचा, उसने पत्थरों को मैदान में ले जाकर गड़े हुए धन से एक मंदिर बनवाया, मंदिर के बनते ही पिशाच को शाप से मुक्ति मिल गई।

भगवान का अनुग्रह

माधव एक छोटा व्यापारी था। उसने मरते वक़्त अपने व्यापार का भार अपने बड़े पुत्र किशन के हाथ सौंप दिया। किशन गरीबी के नाम से ही थर थर काँप उठता था, इसलिए उसने शादी तक नहीं की। वह भर पेट खाता भी न था। मगर उसका छोटा भाई गोपू आराम से जीना चाहता था।

किशन कंजूसी बरता था, फिर भी उसके व्यापार में वृद्धि न होती थी, लेकिन उसी गाँव का गणेश नामक व्यापारी ठाठ से धन खर्च करता था, फिर भी उसकी संपत्ति बढ़ती जाती थी। इसे देख किशन ने एक दिन गणेश से इसका कारण पूछा। गणेश ने केवल यही जवाब दिया–"भाई साहब! यह सब भगवान का अनुग्रह है।"

किशन ने घर लौटकर भगवान की पूजा की और पाँच पैसे भगवान की मूर्ति के सामने रख दिया। दूसरे दिन पाँच पैसे की जगह दस पैसे थे। तीसरे दिन उसने दस पैसे रखे जो बीस पैसे हो गये थे। उसने अपने छोटे भाई को बुलाकर बताया कि भगवान उसके प्रति कैसा अनुग्रह रखते हैं। छोटा भाई गोपू हँसकर रह गया। छोटी रक़म के दुगुना होते देख किशन ने एक दिन अपना सारा धन भगवान के सामने रख दिया।

दूसरे दिन देखा तो भगवान के सामने न धन था और छोटा भाई गोपू भी गायब था।

सिखाई गई शिक्षा

एक गाँव में एक युवक था। उसके मन में यह इच्छा थी कि किसी के यहाँ जाकर बड़ी-बड़ी बातें सीखकर ज्ञानी बन जाना चाहिए। एक बार उसके गाँव में एक साधू आया। युवक ने साधू के पास जाकर पूछा–"साधू महाराज! आप मुझे ज्ञानोपदेश देकर ज्ञानी बना दीजिए।"

साधू ने हँसकर कहा–"पगले, क्या तुमने नहीं सुना कि सिखाई गई शिक्षा और बाँधकर दी गई खाने की पोटली बड़ी देर तक नहीं ठहरती। कौन ऐसा आदमी है जो बड़ी-बड़ी बातें बोलना नहीं जानता हो? बस, इसी से क्या सब लोग ज्ञानी बन जायेंगे?"

युवक ने कहा–"महात्मा! आपकी बातें मेरी समझ में नहीं आ रही हैं।"

"मैं इस प्रदेश में दो दिन और रहूंगा। तुम ये दो दिन मेरे साथ ठहरो, तुम्हें मेरी बातों का अर्थ अपने आप मालूम हो जाएगा।" साधू ने जवाब दिया।

वह युवक दिन भर साधू के साथ घूमता रहा। रात को दोनों एक चबूतरे पर लेट गये। वह घर एक चोर का था। उस रात को चोर चोरी करने जा रहा था, तब उसके लड़के ने ठोका–"बापू, मुझ को भी चोरी करना सिखला दो न! तुम मुझे सिखाते ही नहीं। मैं भी चोर बनना चाहता हूँ।"

"बेटा, सिखाई गई विद्या और बाँधकर दी गई खाने की पोटली कितनी देर तक काम आवेगी? तुम अगर सचमुच चोर बनना चाहते हो तो अपनी बुद्धि का उपयोग करके अनुभव के द्वारा चोर बन जाओ।" चोर ने समझाया।

"तब तो आज मुझे भी तुम्हारे साथ चोरी करने के लिए आने दो न!" बेटे ने

संजय वर्मा

पूछा। चोर ने मान लिया। दोनों चोरी करने निकल पड़े।

ये सारी बातें सुनकर युवक ने साधू से पूछा–"महात्मा! आपने जो बातें कहीं, वे ही बातें यह चोर भी बता रहा है। मैं इसके साथ जाकर देख आता हूँ कि क्या होनेवाला है?" यों कहकर वह युवक भी चोर के पीछे चल पड़ा।

दोनों चोर एक धनी के घर पहुँचे। बड़े चोर ने दीवार में सेंध लगाकर अपने बेटे से कहा–"तुम घर के अन्दर चले जाओ। बीच के कमरे में ढक्कनवाली बड़ी भारी पेटी है। तुम यह नकली चाभी ले लो और बड़ी होशियारी से पेटी खोलकर सोना व चाँदी लेते आओ।"

अपने पिता के हाथ से चाभी लेकर युव ' घर के अन्दर घुस गया। बीच के कमरे ें प्रवेश करके चाभी से भारी पेटी का ढक न खोल दिया और उसके भीतर जाकर ढ॰कन बंद किया। ढक्कन बंद करते वक़्त आहट हुई।

उस आहट को सुनकर घर में सोनेवाले एक-दो आदमी जाग पड़े। उन लोगों ने पूछा–"यह कैसी आहट है?" एक आदमी नींद की खुमारी में अपनी आँखें मलते हुए आया और उस भारी पेटी पर लेटते हुए बोला–"तुम लोग सो जाओ, सुबह उठकर देख लेंगे।"

चोर का बेटा भारी पेटी के अन्दर फंस गया। यह बात मालूम होते ही बाहर

इंतज़ार करनेवाला चोर अपने घर लौट आया। इसे देख चोरों के पीछे गया युवक आश्चर्य में आ गया और वह भी चोर के पीछे लौट आया। चोर घर लौटकर दर्वाजे बंद करके निश्चित सो गया। युवक को लगा कि चोर अपने बेटे के बारे में बिलकुल लापरवाह है।

उधर इस बीच चोर के लड़के ने सारे गहने बाँध लिये और पेटी के भीतर ऐसी आवाज की, जैसे चूहे करते हैं। उस आहट को सुनकर भारी पेटी पर सोनेवाला व्यक्ति "चूहे-चूहे" चिल्लाते पेटी पर से उतर पड़ा और उसने पेटी का ढक्कन खोल दिया। मौक़ा मिलते ही चोर का लड़का बाहर कूद पड़ा, पेटी पर से उतरे हुए व्यक्ति को लात मारकर सेंध से होकर भाग खड़ा हुआ।

लेकिन इस बीच घर भर के लोग जाग उठे। सब लोग 'चोर!' 'चोर!' चिल्लाते चोर का पीछा करने लगे। तब चोर के लड़के ने रास्ते में पड़नेवाले कुएँ में एक बड़ा पत्थर उठाकर डाल दिया और वह निकट के एक पेड़ पर जा बैठा। उस आवाज को सुनकर चोर का पीछा करने वाले लोग कुएँ के पास इकट्ठे हो गये। कोई लालटेन उठा लाया। कुछ साहसी व्यक्ति कुएँ में उतर पड़े। मगर चोर का कहीं पता न लगा। इस बीच काफ़ी वक़्त बीत गया, लोगों ने सोचा कि चोर बचकर भाग गया होगा और वे सब अपने घर लौट गये।

इसके बाद चोर का लड़का इतमीनान से पेड़ से उतर पड़ा। घर लौटकर अपने पिता को जगाया और सारी बातें उसे कह सुनाईं। चोर के लड़के की बातें घर के बाहर चबूतरे पर लेटे साधू और युवक ने भी सुन लीं।

इस पर साधू ने युवक से कहा—"देखते हो न बेटा! आखिर चोर-विद्या को भी अनुभव के द्वारा सीखना होता है। सिखाई गई विद्या किसी काम की नहीं होती।"

१६९. प्रथम वायुयान के उड़ाकों का गौरव चिन्ह

सन् १९०३ दिसंबर २७ को उत्तर कारोलैना राज्य के इस प्रदेश से विल्बर्ट राइट तथा ऑर्विल राइट नामक दो भाई पहली बार वायुयान में उड़े थे। उनका आदर करने के हेतु इस शिल्प का निर्माण किया गया है।

दुष्ट ग्रह
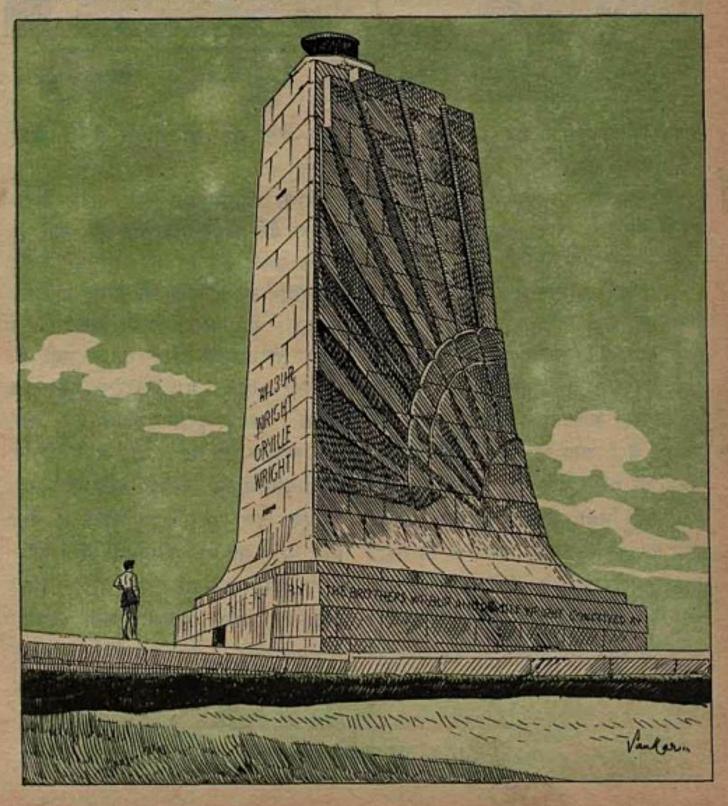
राजा नीहारकुमार एक बार घोड़े पर सवारी करते नीचे गिर पड़ा जिससे उसका एक पैर टूट गया। महा मंत्री जब राजा को देखने आया, तब राजा ने बड़ी निराशा व्यक्त की।

महा मंत्री धीमान ने राजा को सांत्वना देते हुए कहा–"महाराज! आप निराश क्यों होते हैं? आपके पैर की सिर्फ़ एक हड्डी टूट गई है। हमारे दरबारी वैद्य दण्डक बड़ी आसानी से इसका इलाज़ कर सकता है। आप दो हफ़्तों के अन्दर फिर पहले की भाँति चल-फिर सकते हैं।"

"महा मंत्री, आप नहीं जानते। अब मेरे पैर को काट देना पड़ेगा। दो महीने पहले हमारे दरबारी ज्योतिषी ने भी कहा था कि मैं घोड़े पर से गिर पड़ूंगा और मेरा पैर काट देना पड़ेगा। जब घोड़े पर से गिरने की बात सच निकली तो दूसरी बात कैसे झूठ हो सकती है?" राजा ने कहा।

राजा की निराशा का कारण केवल उसका पैर काटने की बात ही नहीं है, बल्कि उनके वंश का यह भी नियम है कि विकालांग व्यक्ति कोई भी शासन नहीं कर सकता। यदि नीहारकुमार विकलांग बन गया तो उसके कोई संतान नहीं है, इसलिए उसका भाई सुरसेन गद्दी पर बैठेगा। मगर सुरसेन महान क्रूर और दुष्ट स्वभाव का था। महा मंत्री धीमान ने सोचते-विचारते पिछली बातें याद कीं।

एक दिन राजा अपने महल में बैठा हुआ था। तब दरबारी ज्योतिषी ने प्रवेश करके बताया था–"महाराज! आज प्रात:काल मैंने आपकी जन्म कुंडली जांचकर देखी। मुझे दुख है कि आज से दो महीने के अन्दर ही आप एक दुर्घटना

ए. सी. सरकार, जादूगर

का शिकार होंगे और आप के अवयवों में से एक को काट देना पड़ेगा।"

ज्योतिषी की ये बातें सुन राजा घबरा गया था। उन्हीं दिनों में एक बार राजभटों ने आकर राजा से निवेदन किया था– "महाराज! हमारे राज्य की पूर्वी सीमा पर एक सुंदर सफ़ेद घोड़ा स्वेच्छा पूर्वक घूम रहा है।" राजा घोड़ों के प्रति बड़ा शौक़ीन था। उस घोड़े को देख राजा प्रसन्न हुआ। उस पर सवारी की। उसकी चाल और दौड़ भी सैर के लायक़ थीं। इसलिए प्रति दिन राजा उस घोड़े पर सवार हो सैर करने जाया करता था।

एक दिन राजा घोड़े पर सवार हो राजपथ पर जा रहा था, तब भीड़ छंट कर घोड़े को रास्ता देनेवाली थी, तभी घोड़ा अपनी पिछली टांगों पर उठ खड़ा हुआ जिससे राजा नीचे गिर पड़ा। उसकी बायें पैर की हड्डी टूट गई।

महा मंत्री धीमान इसी घटना पर विचार करते सोचने लगा कि साधु प्रकृति के उस घोड़े ने ऐसा क्यों किया? मंत्रीं ने उस घोड़े पर अनेक लोगों के द्वारा सवारी करवाकर अंत में यह बात जान ली कि वह घोड़ा पीले रंग को देखने पर भड़क उठता है। तहक़ीकात करने पर मंत्री को मालूम हो गया कि जिस वक़्त राजा दुर्घटना का शिकार हो गया था, उस वक़्त सुरसेन के अनुचर पीले झंड़े हाथ में लिये घटनास्थल पर खड़े थे।
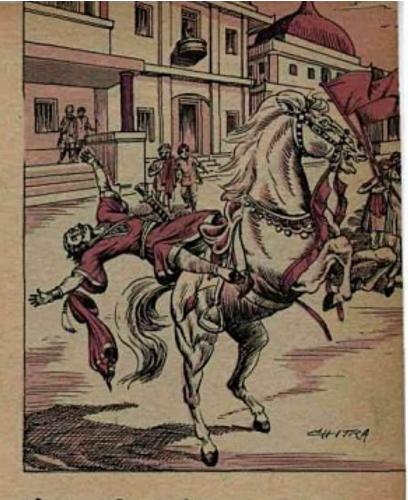
गहराई से जांच करने पर मंत्री को उस षड़यंत्र का भी पता चला। सुरसेन के अश्व-कुशल व्यक्तियों ने उस घोड़े को विशेष प्रशिक्षण दिया जिससे वह पीले रंग को देखते ही भड़क उठे। प्रशिक्षण के बाद उस घोड़े को राज्य की सीमा पर छोड़कर उसका समाचार-श्री राजा को सुरसेन के अनुचरों ने दिया था।

महामंत्री ने समझ लिया कि सुरसेन ने राज्य के लोभ में पड़कर राजद्रोह किया है। उसके षड़यंत्र को सफल बनाने का
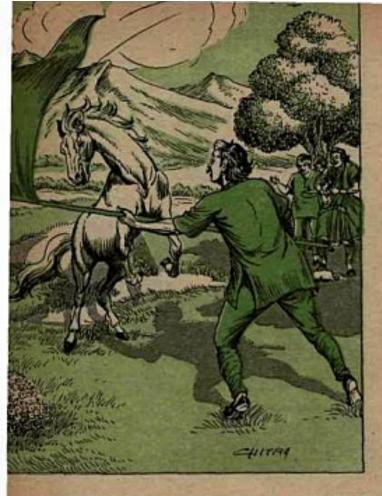
मंत्री ने निश्चय कर लिया। महामंत्री को यह भी मालूम हुआ कि इस षड़यंत्र में राज्य के अनेक प्रमुख व्यक्ति शामिल हैं। मंत्री को जिन पर संदेह था, उनमें दरबारी ज्योतिषी तथा वैद्य भी शामिल थे। मगर उन षड़यंत्रकारियों के संबंध में उचित प्रमाण न थे। इसलिए महा मंत्री ने यह बात राजा से न कही।

महा मंत्री के मायाधर नामक एक जादूगर मित्र था। मंत्री ने मायाधर से सलाह लेकर एक अच्छी योजना तैयार की।

महारानी रूपमती के पिता के राज्य में एक प्रसिद्ध वैद्य था। वह टूटी हुई हड्डियों को जोड़ने में बड़ा ही प्रवीण था। उसका नाम जीवक था। महा मंत्री ने महारानी रूपमती के द्वारा जीवक को बुला भेजा और उसे राजा के पास ले जाकर बोला– "महाराज! इनका नाम जीवक है। ये टूटी हुई हड्डियों को जोड़ने में प्रवीण हैं। हड्डियाँ क्या, टूटे हुए तिनकों और तीलियों को भी जोड़ सकते हैं; आप इनकी परीक्षा ले सकते हैं।" यों कहते महा मंत्री ने एक जेब रूमाल मेज पर बिछा दिया। इसके बाद उसने दियासलाई की काडी के बराबर के दो तीलियों को लेकर उन पर राजा के हाथों से स्याही के निशान लगवाये, तब जेब रूमाल में लपेटकर राजा के हाथ दे उसे तोड़ने को कहा।

"महाराज! आप यह समझ लीजिए कि यह तीली ही आपके पैर की हड्डी है। उस पर लपेटा गया जेब रूमाल आपके पैर की माँस पेशियाँ हैं। जेब रूमाल पर दबाकर देखने से आपको तीली का पता चलेगा। आप उस तीली के टुकड़े टुकड़े कर दीजिए।" महामंत्री ने बताया।

इस पर राजा ने रूमाल के साथ तीली को पकड़कर उसे दो जगह तोड़कर उसके कुल तीन टुकड़े कर दिये, तब महामंत्री ने महाराजा के हाथ से जेब रूमाल को लेकर जीवक के हाथ दिया। जीवक ने कोई मंत्र पढ़े, तब उसपर तीन बार

फूंककर रूमाल खोल दिया। राजा ने जिस तीली पर स्याही के निशान किये थे, वह तीली ज्यों की त्यों नीचे गिर गई।

राजा आश्चर्य में आ गया। अपनी आँखें विस्फारित करके तीली की ओर देखा, तब जीवक के द्वारा इलाज कराने की स्वीकृति दी। जीवक ने तत्काल ही राजा के पैर में पट्टी बांध दी। इसके बाद महामंत्री ने राजा के लिए पूर्ण विश्राम का बहाना करके उनको एक सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया।

एक सप्ताह के अन्दर ही राजा की स्थिति में बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया। इस बीच महामंत्री धीमान ने षड़यंत्रकारियों के संबंध में अनेक विवरण प्राप्त किये। उन्होंने राजद्रोहियों की कूटनीतिक चालों का राजा को परिचय दिया।

राजा ने उद्रेक में आकर राजद्रोहियों को बन्दी बनाने का आदेश दिया, तब महामंत्री ने उन्हें समझाया–"महाराज! आप शांत हो जाइए। हमें इस वक़्त जल्दबाजी नहीं करनी है, ठीक वक़्त सभी मछलियाँ हमारे जाल में फँस जायेंगी।"

"अच्छी बात है! जैसा आप उचित समझें, करे।" राजा ने कहा।

"मगर आपको थोड़ा श्रम उठाकर इस प्रकार का बहाना थोड़े समय के लिए करना होगा कि आपका पैर काट दिया गया है। मैं भी इस बात की घोषणा कराने जा रहा हूँ कि आपका एक पैर काट दिया गया है। जीवक भी इस प्रकार पट्टी बांध देंगे कि आपका एक पैर गायब है। आपको थोड़े समय के लिए बैशाखियों की मदद से चलना होगा।" मंत्री धीमान ने समझाया।
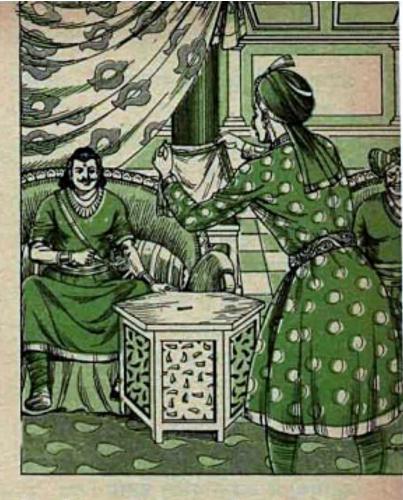
सारी बातें अच्छी तरह से संपन्न हुईं। दूसरे सप्ताह के समाप्त होते-होते राजा का पैर बिलकुल स्वस्थ हो गया।

"जीवक, तुम्हारा कार्य बड़ा ही प्रशंसनीय है।" मंत्री ने प्रशंसा की।

"आपके कार्य से मेरा कार्य थोड़ा ही प्रशंसनीय है। आपने तो टूटी तीली को

पल भर में जोड़ दिया है, यह तो एक अद्भुत कार्य ही कहा जाएगा ।" जीवक ने कहा ।

"इसमें मेरा योगदान बिलकुल नहीं है, वह तो मायाधर का जादू है । मैं ने जिस जेब रूमाल का उपयोग किया, उसमें पहले से ही उस प्रकार की एक तीली थी । निशान लगाई गई तीली को रूमाल में रखकर लपेट दिया और राजा के हाथ में रूमाल में स्थित तीलियों को पकड़ा दिया । असली तीली रूमाल की तहों में दूसरी जगह सुरक्षित थी । राजा ने केवल नकली तीली को तोड़ दिया है । टूटी हुई तीली रूमाल के किनारे में ही रह गई थी ।" महामंत्री ने अपनी युक्ति बताई ।

अब राजद्रोहियों को बन्दी बनाने का काम रह गया था । वह कार्य भी आखिर सफलता पूर्वक संपन्न हुआ ।

सुरसेन ने जब यह समाचार सुना कि राजा का पैर काट दिया गया है, तब वह बड़ा प्रसन्न हुआ । उसके अनुचरों का उत्साह उमड़ पड़ा । सुरसेन के राज्याभिषेक का प्रबंध हो चुका था । ठीक उसी दिन राजा अपनी बैशाखियों के सहारे दरबार में पहुँचा । सुरसेन अपने अनुचरों के द्वारा किरीट मस्तक पर रखवाने के लिए आगे बढ़ा । नीहारकुमार किरीट हाथ में लेकर सुरसेन के मस्तक पर पहनाने जा रहा था तभी "ठहर जाइये!" शब्द सभा भवन में गूँज उठे । ये शब्द कहनेवाला व्यक्ति महामंत्री धीमान था । मंत्री के साथ रानी एक तलवार लेकर दरबार में पहुँची । उसने पट्टी को तलवार से काट दिया । इस पर राजा अपने पैर नीचे उतारकर ठीक से खड़ा हो गया और चिल्ला उठा– "राज द्रोहियों को बन्दी बनाओ ।"

शीघ्र ही राजद्रोहियों की सुनवाई हुई । उन सबको देश निकाले का दण्ड सुनाया गया । इसके बाद राजा नीहारकुमार रानी रूपमती के साथ निश्चिंत शासन करने लगा । प्रजा ने सुख की चैन ली ।

प्रहस्त ने हनुमान को रावण का आदेश सुनाया, इसपर हनुमान ने यों उत्तर दिया–

"आप राक्षसों के राजा हैं। आपको देखने के ख्याल से ही मैं ने अशोक वन को ध्वस्त किया है; पर आपको देखना संभव न हुआ। उसी वक़्त अत्यंत बलवान राक्षस मेरे साथ युद्ध करने आये। मुझे अपनी आत्मरक्षा के हेतु उनके साथ युद्ध करना पड़ा। ब्रह्मा का मुझे वरदान प्राप्त है कि मुझको कोई अस्त्र या पाश बंदी नहीं बना सकते, परंतु मैं केवल आपको देखने के लिए ही ब्रह्मास्त्र के लगने पर बन्दी हो गया। बस, आप अन्यथा मत सोचे। मैं महान पराक्रमी श्रीरामचन्द्र का दूत हूँ। आप से एक राजनैतिक कार्य संपन्न करना है। आप का हित चाहते हुए मैं जो बातें बता रहा हूँ उन्हें सावधानी से सुनिये:

"वानर राजा सुग्रीव ने अपने कुशलक्षेम आपको बताने तथा आपके कुशल-क्षेम जानने की इच्छा प्रकट की है। वाली को तो आप जानते ही हैं। उस वाली का श्रीरामचन्द्र ने एक ही बाण के द्वारा वध करके सुग्रीव को वानर राजा नियुक्त किया है। सुग्रीव ने रामचन्द्रजी को यह वचन दिया है कि वे सीताजी का अन्वेषण करायेंगे। इसी आशय के हेतु वानरों को सभी दिशाओं में भेजा है। उनमें से मैं एक हूं। मैं वायुदेव का पुत्र

हूँ। मेरा नाम हनुमान है। मैं सौ योजनवाले समुद्र को पारकर सीताजी को देखने यहाँ पर आया हूँ। आपके अधीन में स्थित सीताजी को मैं ने देख लिया है। धर्मशास्त्र के ज्ञाता होकर भी आपने जबर्दस्ती पराई नारी को बन्दी बनाकर रखा है। श्रीरामचन्द्र तथा लक्ष्मण के क्रोध का शिकार हुआ व्यक्ति तीनों लोकों में से कोई भी बच नहीं सकता। यह बात आपको सुनाने के लिए सुग्रीव ने मुझे आदेश दिया है। मैंने सीताजी को देख लिया है; अब शेष कर्तव्य श्रीरामचन्द्रजी का है।

परंतु उस कार्य के संबंध में मैं कुछ नहीं जानता। यदि मैं चाहूँगा तो अकेले ही लंका को ध्वस्त कर सकता हूँ, मगर रामचन्द्रजी का यह अभिमत नहीं है। उन्होंने वानर एवं भल्लूक सेनाओं के समक्ष यह प्रतिज्ञा की है कि वे ही स्वयं सीताजी के अपहरण करनेवाले का वध करेंगे। यह बात भली भाँति समझकर निर्णय कर लीजिए कि सीताजी आपके ललाट की मृत्यु देवी हैं। मैं न मानव हूँ और न राक्षस हूँ, इसलिए बिना पक्षपात के सही बात बता रहा हूँ। आपको रामचन्द्रजी के हाथों से कोई बचा नहीं सकते!"

हनुमान के मुँह से ये निर्भयपूर्ण बातें सुनकर रावण क्रोध में आया और गरजकर बोला–"इस हनुमान को मार डालो।"

इस पर बुद्धिमान विभीषण ने रावण से कहा–"सम्राट! हनुमान का वध करना राज धर्म के विरुद्ध है। आप जैसे पंडित के द्वारा ऐसा कार्य नहीं होना चाहिए। आप क्रोध में आकर ये बातें कह रहे हैं। इसलिए अपने क्रोध पर नियंत्रण करके राजदूत के योग्य कोई दूसरा दण्ड दीजिए।"

फिर भी रावण का क्रोध कम न हुआ। उसने विभीषण से कहा–"यह वानर पापी है। पापियों का वध करना पाप नहीं कहलाता।"

"महाराज! सज्जनों का कहना है कि किसी भी स्थिति में दूत का वध नहीं

करना चाहिए। फिर भी दूत के योग्य अनेक दण्ड बताये गये हैं। उनका अंग-विच्छेद किया जा सकता है। उन्हें कोड़े लगाया जा सकता है। उनका सिर मुंडाया जा सकता है। उनकी देह पर गरम लोहे की निशानी लगाई जा सकती। मगर किसी भी शास्त्र में दूत के वध का विधान नहीं है। आप जैसे साहसी को क्रोध के वशीभूत नहीं होना है। अलावा इसके इस दूत का वध करने से हमारा कोई प्रयोजन सिद्ध होनेवाला नहीं है। आपको तो उन व्यक्तियों का वध करना है जिन्होंने इसे यहाँ पर भेजा है। इसने जो भी बातें कहीं, वे इसकी नहीं हैं। मुझे ऐसा नहीं लगता कि इसे छोड़कर कोई दूसरा इस समुद्र को लांघ सके। इसलिए इसका वध करने पर राम तथा लक्ष्मण को यहाँ बुलवाकर आप के साथ युद्ध करने की मदद करनेवाला दूसरा न होगा। यदि आप उन्हें बन्दी बनायेंगे तो आप का यश बढ़ेगा।"

विभीषण की बातों पर संतुष्ट हो रावण ने उसकी सलाह के अनुसार करने का निश्चय किया। तब उसने यों कहा— "तुम्हारा कहना सही है। दूत का वध करना गलत ही होगा। राजनीति के अनुसार दूत अवध्य होता है। इसलिए इसे कोई दूसरा दण्ड देंगे। बन्दरों के लिए पूंछ प्रिय होती है, अतः इसकी पूंछ में आग लगाकर छोड़ दो।"
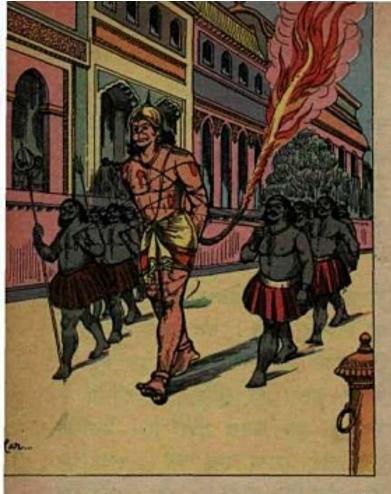
इसके बाद यह आदेश हुआ कि हनुमान की पूंछ में आग लगाकर सारे नगर में घुमाया जाय।

राक्षसों ने चीथड़े लाकर हनुमान की पूंछ में लपेट दिया, तब पूंछ पर तेल डालकर आग लगा दी।

जब यह सारा कार्य किया जा रहा था, तब हनुमान का क्रोध भीतर ही भीतर उबल रहा था। आखिर उसने जलनेवाली अपनी पूंछ से उन सबको दे मारा। राक्षस चिल्लाते जहाँ-तहाँ भाग गये।

इस बीच यह खबर सारी लंका में फैल गई कि हनुमान की पूंछ जला दी गई है। तब नगर के सभी बच्चे, स्त्रियाँ व बूढ़े प्रसन्नतापूर्वक उसको देखने जमा हो गये। उस समय सभी राक्षसों ने मिलकर हनुमान को पकड़ लिया। उसे बाँधकर अपने साथ ले गये। हनुमान को इस बात का डर न था कि उसकी पूंछ जल जाएगी, इसलिए वह उनके साथ चला गया। क्योंकि उस वक़्त वह लघु रूप में था।

राक्षसों ने शंख और भेरियाँ बजाते हनुमान को सारी लंका में घुमाया। इस प्रकार घूमते हनुमान ने लंका के आयुधागार तथा अन्य अनेक गुप्त प्रदेशों को देखा। सब जगह राक्षस हनुमान को गुप्तचर कहकर चिल्लाते रहें।

राक्षस नारियों के द्वारा सीताजी ने सुना कि हनुमान की पूंछ में आग लगा दी गई है, इस पर वह बहुत दुखी हुईं। उन्होंने अग्निदेव का स्मरण करके प्रार्थना की कि हनुमान की कोई हानि न हो।

सीताजी को दुखी देख सरमा ने कहा– "माई, आप उस वानर के बारे में चिंता न कीजिए। वह साधारण वानर नहीं, महानुभाव है। अपने साथ चलनेवाले हाक्षसों को मारकर एक घर से दूसरे घर पर कूदते लंका को जला रहे हैं। आप देखिए तो एक-बार!"

सरमा का कहना बिलकुल सच था। हनुमान ने राक्षसों को दण्ड देने का

निश्चय किया, अपने शरीर को लघु बनाकर बंधनों से वह मुक्त हुआ। पुनः अपनी देह को बढ़ाकर नगर द्वार के निकट स्थित लोहे के गदा को लेकर अपना पीछा करनेवाले सभी राक्षसों को मार डाला। तब जाकर उसके मन में यह विचार आया कि लंका को जला डालना चाहिए। वह जलनेवाली अपनी पूँछ को लेकर लंका के भवनों पर विहार करने लगा।

हनुमान ने सर्वप्रथम प्रहस्त का घर जलाया, तदनंतर महापार्श्व के घर पहुँचा। उसमें भी आग लगाकर क्रमशः शुक, वज्रदंष्ट्र, सारण, इंद्रजित, जंबुमाली, सुमाली इत्यादि प्रमुख राक्षसों के घर जलाये। उसने केवल विभीषण के घर को नहीं जलाया। राक्षसों के घरों के साथ उनके द्वारा इकट्ठी की गई सारी संपदाएँ जलकर राख हो गईं। अंत में उसने रावण के महल को भी जलाया।

उस समय तक रावण से डरने का अभिनय करनेवाले वायु, अग्नि अब प्रज्वलित हुईं प्रतीत हुईं। मकानों के भीतर के सोना, चाँदी इत्यादि गल गये। बड़े-बड़े महल धराशाई हो गये। राक्षसों की समझ में न आया कि इस दहनकांड को कैसे रोके? उन्हें संदेह हुआ कि अग्नि देव ही वानर के रूप में आया होगा।
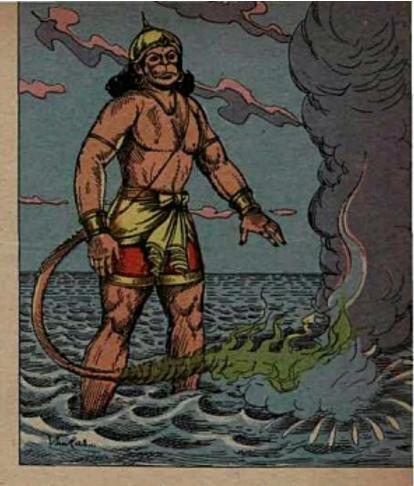
असंख्य राक्षस अग्नि की आहुति हुए और अत्यंत सुंदर लंका नगर अब भयंकर प्रतीत हो रहा था। राक्षसों के आर्तनादों से आसमान गूंज उठा।

तब जाकर हनुमान का क्रोध शांत हुआ, वह संतुष्ट भी हुआ। उसका काम सफल हो गया था। अशोक ध्वस्त हो गया था। असंख्य राक्षस मर गये थे। लंका नगर भस्म हो गया था। तब जाकर उसने अपनी पूंछ को समुद्र में डुबोकर बुझाया।

यह सारा कार्य समाप्त होने पर हनुमान को पश्चात्ताप होने लगा कि उसने कोई अच्छा काम नहीं किया। उसे इस बात का भी डर होने लगा कि सारे लंका
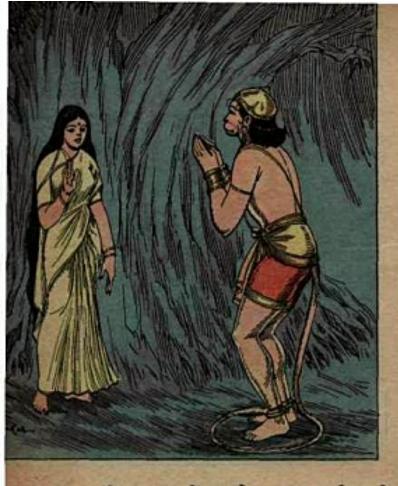
नगर के भस्म हो जाने पर क्या सीताजी कुशल होंगी? आवेश में आकर वह लंका को तो जला रहा था, पर वह सीताजी की रक्षा करने की बात भूल गया था। वास्तव में यदि सीताजी की कोई हानि हुई हो तो उसने वहीं पर जान देने का निश्चय कर लिया। परंतु उसके मन में कोई दूसरा विचार आया। जिस अग्निदेव ने उसकी पूंछ तक को नहीं जलाया, वे सीताजी को क्यों कर जलायेंगे?

वह झट से शिशुपा वृक्ष के पास गया। उसके नीचे बैठी सीताजी को प्रणाम कर बोला–"माताजी! मेरे भाग्य से आप कुशल हैं न?"

सीताजी ने हनुमान से कहा–"हनुमान, तुम्हारी शक्ति की बात क्या कही जाय? तुम अकेले ही सारे राक्षसों का वध करके मुझे श्रीरामचन्द्रजी के पास ले जा सकते हो! लेकिन स्वयं रामचन्द्रजी आकर शत्रुओं का संहार करके मुझे ले जायेंगे तो उत्तम होगा। इसलिए तुम रामचन्द्रजी के पास जाकर उनको प्रेरित करो।"

"माताजी! आप संदेह मत कीजिए। रामचन्द्रजी स्वयं आकर आपका दुख दूर करेंगे।" यों सांत्वना देकर सीताजी से विदा ले हनुमान अरिष्ट नामक पर्वत पर जा चढ़ा। पुनः समुद्र को पार करने के लिए अपनी देह का विस्तार किया। वह पैरों से पर्वत को लात मारकर हवा में उड़ा। इस पर अरिष्ट पर्वत हिल उठा।

हनुमान मेघों के बीच उड़ते समुद्र को पार कर महेन्द्र पर्वत को देखते ही सिंहनाद कर उठा। बड़ी उत्कंठा के साथ हनुमान की प्रतीक्षा करनेवाले अंगद आदि वानरों ने हनुमान का सिंहनाद सुना। उनका उत्साह उमड़ पड़ा।

इस पर जांबवान ने अन्य वानरों से कहा–"हनुमान का कार्य सफल हो गया है, वरना वह इतनी ध्वनि के साथ सिंहनाद नहीं करता।" ये बातें सुन वानर परमानंदित हो हनुमान को देखने के

लिए पेड़ और शिखरों पर जा चढ़े। दूर पर उसे देखते ही सबने पेड़ों की डालें हिलाकर संकेत किया।

शीघ्र ही हनुमान महेन्द्र पर्वत पर जा उतरा। वानरों ने उसे घेर लिया। उन सबने कंद-मूल एंव फल लाकर हनुमान को दिये। हनुमान ने जांबवान, अंगद आदि बड़े बुजुर्गों को प्रणाम किया, उसने अपना मुँह खोलते ही केवल दो शब्दों में सबको समाचार दिया–"सीताजी को देखा है।" इस पर वानर अत्यंत आनंदित हुए। कुछ लोगों ने सिंहनाद किये। कुछ लोग ज़ोर से चिल्ला उठे। कुछ लोगों ने गर्जन किया। कुछ लोग बंदरों की भाँति किच् किच् कर उठे। कुछ लोगें ने ज़ोर से अपनी पूँछ ज़मीन पर दे मारी, कुछ लोगों ने प्रसन्नतापूर्वक हनुमान क स्पर्श किया।

हनुमान बोला–"मैंने सीताजी को देखा है।" फिर मौन रह गया।

इसके उपरांत अंगद ने हनुमान से कहा–"वीर हनुमान! तुम सौ योजनों की दूरी के समुद्र को पार कर गये और लौट आये। तुम्हारे बल एवं पराक्रम और किसके पास है? तुम्हारी राजभक्ति भी असाधारण है। हमारे भाग्य से तुम श्रीरामचन्द्र की पत्नी सीताजी को देख आये। अब रामचन्द्रजी के लिए सीताजी का वियोग न होगा।"

हनुमान बीच में बैठ गये, उसके चारों तरफ़ जांबवान, अंगद आदि विराजमान हुए। बाक़ी वानर चारों तरफ़ की शिलाओं पर जा बैठे। लंका का समाचार हनुमान के मुँह से सुनने का कुतूहल सबके मन में हिलोरें मार रहा था।

जांबवान ने हनुमान से कहा–"बेटा, तुमने सीताजी को कैसे देखा? वह कैसी हैं? रावण उनके साथ कैसा व्यवहार कर रहा है? ये सारी बातें सुनने के बाद हम अपने कर्तव्य के बारे में विचार कर लेंगे। तुम सारी बातें सच सच बता दो, तब हम निर्णय कर लेंगे कि कौन सी बातें श्रीरामचन्द्रजी से कहनी हैं और कौन बातें नहीं कहनी हैं?"
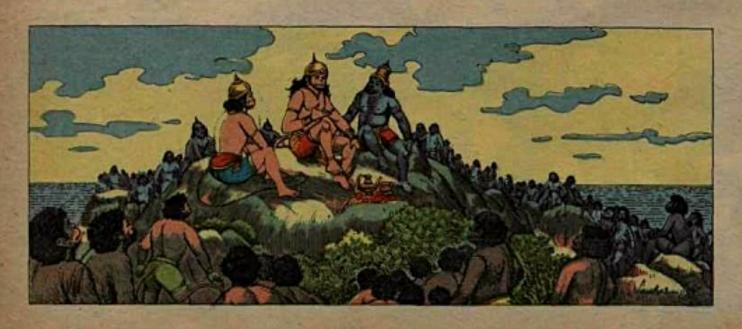
एको देवः, केशवो वा शिवोवा,
एकम् मित्रम्, भूपतिर्वा यतिर्वा,
एका भार्या, सुंदरी वा दरीवा,
एको वासः, पत्तने वा वनेवा ॥ १ ॥

[भगवान केशव हो या शिवजी ही हो; मित्र राजा हो या सन्यासी, गृहस्थी चलानी हो तो सुंदर पत्नी के साथ चलाया करे अथवा पहाड़ी गुफा में निवास करे; रहना हो तो नगर में हो या जंगल में।]

कुसुमस्तबकस्येव द्वयी वृत्ति र्मनस्विनः,
मूर्ध्निवा सर्वलोकस्य, शीर्नते वन एव वा ॥ २ ॥

[फूलों के गुच्छे की भाँति स्वाभिमानी व्यक्ति के सामने दो ही मार्ग हैं—सबके मस्तक पर शोभा दे या जंगल में शिथिल होकर नाश को प्राप्त करे।]

निंदंतु नीतिनिपुणा यदि वास्तुवंतु,
लक्ष्मी स्समाविशतु, गच्छतु वा यथेष्टम्,
अद्येव वा मरण मस्तु, युगांतरे वा,
न्यायात्पथः प्रविचलंति पदम् न धीराः ॥ ३ ॥

[नीतिवान निंदा करे, संपदा प्राप्त हो या न हो, दूसरे ही क्षण मृत्यु प्राप्त हो या युगांत तक प्राप्त न हो, पर साहसी व्यक्ति नीति-पथ को कभी त्यागते।]

Photo by S. G. Seshagiry
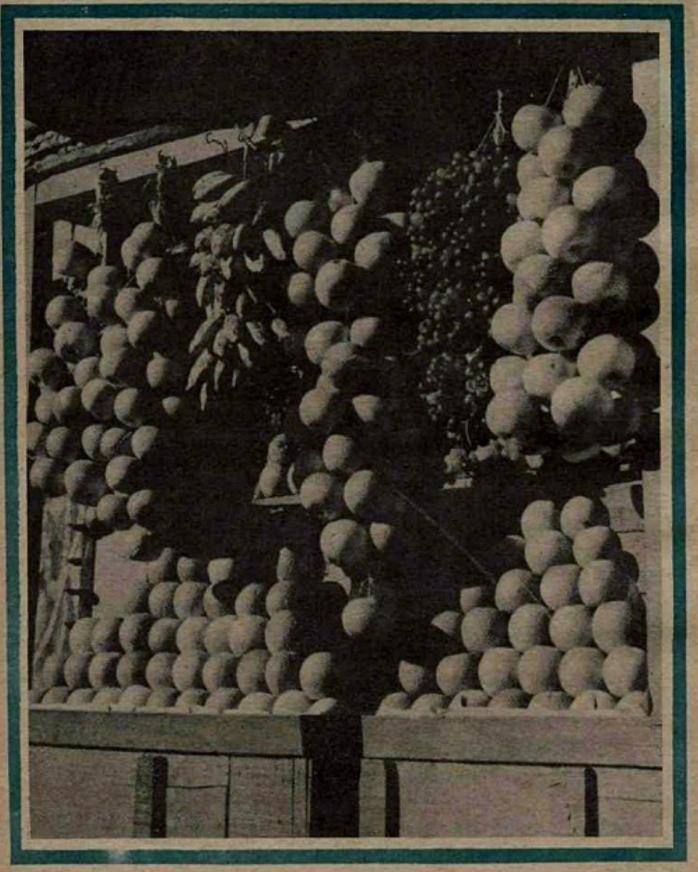
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

सेब, मौसम्बी, अंगूर और केले!

प्रेषक :
रमेश कुमार

Photo by M. Natarajan

म. नं: २१-७-२९, गांधी बाजार, हैदराबाद - २
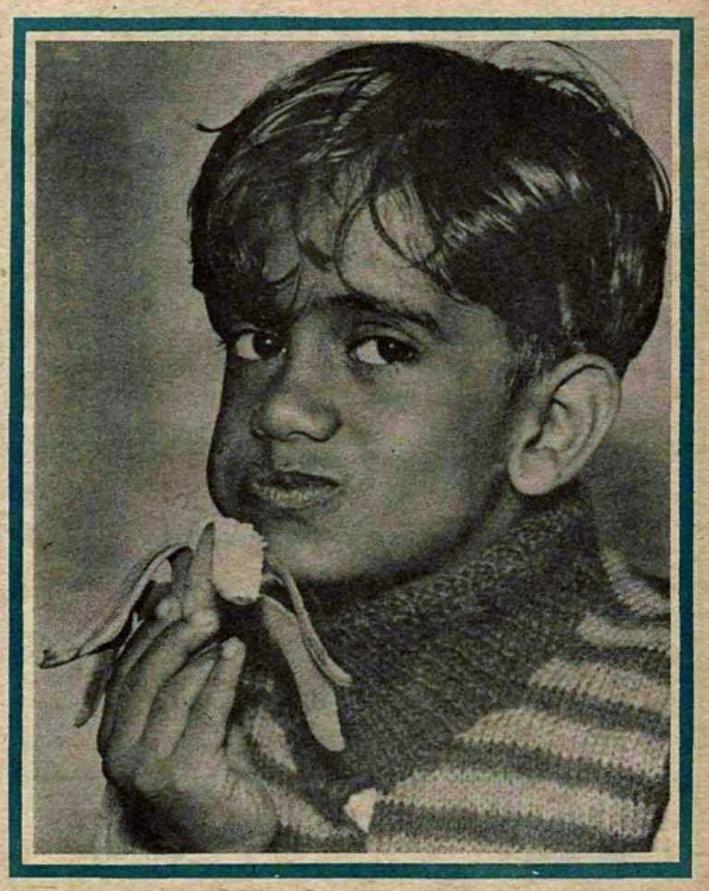
क्यों खा रहे हो, तुम अकेले?

पुरस्कृत परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ फ़रवरी १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अप्रेल के अंक में प्रकाशित की जायेंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Ltd., and Pubilshed by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras - 600 026: Controlling Editor: NAGI REDDI

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

मुझे प्यार है
से
बच्चों का प्यारा जूता है चलता है देखो कितना
हर बच्चे को अच्छा लगता रक्षक भी यह पैरों का.
पहन उसी को ले कर बच्चों पूर्ण करो हर काम
नंबर जोड़कर ज़रा तुम बतलाओ तो उसका नाम.
टैनरी एण्ड फुटवियर कॉर्पोरेशन ऑफ इण्डिया लिमिटेड
(भारत सरकार का एक प्रतिष्ठान)
१३/४००, सिविल लाइन्स. पोस्ट बाक्स नं० ३२६, कानपुर

Photo by : VIJAY KUMAR SARAOGI

BONDAGE

Vapā